परमेश्वर से संबंध जोड़ना

प्रभु की प्रार्थना में अन्तर्दृष्टि

Hindi Version of:
CONNECTING WITH GOD
INSIGHTS INTO THE LORD'S PRAYER
By Diana Schick

रचनात्मक जीवन बाइबल अध्ययन

परमेश्वर से संबंध जोड़ना

प्रभु की प्रार्थना में अन्तर्दृष्टि

लेखिका
डायना शिक

अनुवादिका
शांति रावटे

यह बाइबल अध्ययन www.clbs.org से नि:शुल्क डाउन-लोड् किया जा सकता है।

PARMESHWAR SE SAMBANDH JODNA
Prabhu Ki Prarthna Mein Anterdrishti

First Edition : June 2009

Hindi Version of
CONNECTING WITH GOD
INSIGHTS INTO THE LORD'S PRAYER
By Diana Schick

Creative Living Bible Study
By Creative Living International
© Creative Living International

Hindi Translation : Shanti Rawate

This Bible Study can be downloaded free at www.clbs.org

Copies are available from :
Rev. Stephen Rawate,
Executive Director, AIDA
Post Box 7530
Vasant Kunj
New Delhi - 70
India

परमेश्वर से संबंध जोड़ना

प्रभु की प्रार्थना में अन्तर्दृष्टि

भाग १: परमेश्वर तथा उसकी इच्छा पर ध्यान केंद्रित करना

पाठ १: प्रस्तावना 3

एक सिद्ध स्वर्गीय पिता का होना 5

पाठ २: स्वर्ग कैसा है 14

पाठ ३: परमेश्वर को जानना 23

पाठ ४: परमेश्वर की भली एवं सिद्ध इच्छा 30

भाग २: अपनी आवश्यकताओं और समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करना

पाठ ५: मांगो, ढूंढ़ो, खटखटाओ 39

पाठ ६: क्षमा की स्वतंत्रता 45

पाठ ७: क्षमा करने की स्वतंत्रता 53

पाठ ८: परीक्षा का सामना करना 60

पाठ ९: बुराई से रक्षा 69

पाठ १०: राज्य, पराक्रम और महिमा 76

प्रार्थना करने हेतु एक गाइड के रूप में प्रभु की प्रार्थना 84

प्रमुख टिप्पणियां 85

संदर्भ ग्रंथ सूची 86

लेखिका का परिचय

परमेश्वर से संबंध जोड़ना

प्रभु की प्रार्थना में अन्तर्दृष्टि

भाग १

परमेश्वर तथा उसकी इच्छा पर ध्यान केंद्रित करना

पाठ १

प्रभु की प्रार्थना संभवतः बाइबल का सर्वाधिक परिचित लेखांश है। इसका उच्चारण हर सप्ताह, विश्व भर में, करोड़ों बार किया जाता है। संक्षिप्त, अत्यधिक ज्ञान एवं समझ से भरपूर, सरल, शान्तिपूर्ण ये 78 शब्द जो प्रभु की प्रार्थना के नाम से जाने गये हैं, परमेश्वर से हमारा संबंध तथा जीवन में तृप्ति के विषय में गहरी सच्चाइयों को प्रकट करते हैं।

यीशु ने अपने शिष्यों को यह आदर्श-स्वरूप प्रार्थना तब दी जब उन में से एक ने कहा था, "हे प्रभु ... प्रार्थना करना ...हमें भी तू सिखा दे"(लूका 11:1)। वे सारे शिष्य यहूदी थे और प्रार्थना से परिचित थे, परन्तु कदाचित उन्होंने देखा था कि यीशु का अपने पिता से बातचीत करना कुछ भिन्न और उसकी आश्चर्यजनक सेवकाई का भेद था। उन्हों ने अवश्य ही देखा होगा कि उसके बारंबार प्रार्थना के अवसर वास्तव में उसे अदृश्य संसार से जोड़ते थे। एक लेखक कहते हैं:

> *यह स्पष्ट हो गया था कि यीशु का अनंतकाल से संबंध था। यद्यपि वह समय में से होकर चला-फिरा परन्तु उसके संबंध में कुछ ऐसा था जो समय से परे था। उसमें कुछ था जिसने लोगों का सामना जीवन के गहन मुद्दों से करवाया। मुझे विश्वास है कि उसके साथ रहने में मजा आता होगा - वह एक स्वाभाविक तथा आनन्दमय, अच्छा साथी था - परन्तु किसी तरह से उसका व्यवहार तथा उसके शब्द लोगों के ध्यान को महत्वपूर्ण बातों की ओर, गहराई एवं स्थायित्व के मुद्दों की ओर ले जाते थे। वह एक ऐसा मनुष्य था जिसका एक पैर तो उस*

समय में था – क्योंकि उसके देहधारण के द्वारा परमेश्वर ने वास्तव में इतिहास को विभाजित किया – परन्तु दूसरा पैर अनन्तकाल में था।[1]

अत:, कदाचित उस शिष्य की वास्तविक इच्छा, जिसने कहा था, "हे प्रभु . . . प्रार्थना करना . . . हमें भी तू सिखा दे," मसीह के सामर्थी जीवन के भेद को जानने की थी। यीशु ने उत्तर में एक संक्षिप्त प्रार्थना बताई जिसे सारी प्रार्थनाओं के लिये सामान्य निर्देश (गाइड) के रूप में लिया जाना था।

प्रभु की प्रार्थना में दो भाग है। प्रथम भाग परमेश्वर तथा उसके जगत में किये जानेवाले उद्धार के कार्य पर ध्यान केंद्रित करता है (मत्ती 6:9-10)। दूसरा भाग व्यक्तिगत आवश्यकताओं तथा दैनिक संघर्ष पर जोर देता है (मत्ती 6:11-13)। यह क्रम स्पष्ट करता है कि प्रार्थना का आरंभ स्वयं से हटकर परमेश्वर के ऐश्वर्य तथा हमारे जीवन में उसकी इच्छा (उसका राज्य या प्रभुता) पर ध्यान केंद्रित करने से होना चाहिये। यह हमें तैयार करता है कि जब हम चिन्ताओं और आवश्यकताओं के लिये प्रार्थना करते हैं तो अपनी इच्छा से बढ़कर उसकी इच्छा को चाहें।

संभवत: स्मरण रखने के लिये सब से महत्वपूर्ण बात यह है कि यीशु ने प्रभु की प्रार्थना पाखंड़ का सख्ती से काट-छांट करनेवाली शिक्षा के संदर्भ में दी थी। यह प्रार्थना एक लिटर्जी (उपासना-पद्धति) बनने के लिये कदापि नहीं थी, परन्तु प्रेमी स्वर्गीय पिता से प्रतिदिन की आवश्यकताओं के विषय में निष्कपट बातचीत का उदाहरण प्रस्तुत करने दी गई थी। जब हम प्रभु की प्रार्थना हृदय से करते हैं केवल तब ही हम परमेश्वर को आनन्दित करते हैं और स्वयं के लिये तृप्ति पाते हैं।

फिर भी प्रभु की प्रार्थना के अर्थ पर विचार किये बिना उसका उच्चारण कर देना कितना सरल है। हमारे इस महान प्रार्थना के अध्ययन का उद्देश्य यह है कि हम उसके अर्थ को और अधिक पूरी रीति से समझ सकें और उसे पूरी निष्कपटता से करने योग्य बन सकें। दूसरा उद्देश्य यह है कि इस आदर्श-स्वरूप प्रार्थना से उन सिद्धान्तों को सीखें जो हमारे प्रार्थना के सामान्य जीवन का निर्देशन करते हैं कि हम यीशु के समान बनें, ताकि हम भी उस सामर्थ्य तथा आनन्द को जान सकें जो एक पैर समय में तथा दूसरा अनन्तकाल में जड़ा होने से प्राप्त होता है।

एक सिद्ध स्वर्गीय पिता का होना

"हे हमारे पिता . . ."

कितना बड़ा सौभाग्य है परमेश्वर को "हे हमारे पिता" संबोधित करना! यह यीशु ही था जिसने परमेश्वर की कल्पना करने का ऐसा घनिष्ठ ढंग सिखलाया। अपनी सारी सेवकाई के दौरान यीशु ने परमेश्वर से ऐसे घनिष्ठ, व्यक्तिगत, पारिवारिक-रूप के सम्बन्ध का आदर्श प्रस्तुत किया और उसके लिये प्रोत्साहित किया। सुसमाचारों में 70 से भी अधिक हवाले हैं जिसमें यीशु परमेश्वर को पिता संबोधित करता है।

यीशु के समय तक के धर्मशास्त्र में परमेश्वर को पिता कहने का उल्लेख लगभग नहीं था। तथापि, स्वर्ग एवं पृथ्वी के सर्व-शक्तिमान परमेश्वर - जो समझ से परे है - के गुणों को प्रकट करने के लिये अन्य मानवीय शब्दों का उपयोग किया गया था। उदाहरण के लिये, पुराना नियम के लेखांश कहते हैं कि उसका मुख हमारी ओर अनुग्रह से देख रहा है, उसके कान हमारी प्रार्थनाएं सुन रहे हैं, उसकी आंखे सारी बातों को देख रही हैं, उसकी वाणी उसका वचन हमें बता रही है, उसकी ऊंगलियां हमारी रचना कर रही हैं, उसके हाथ उसकी संतानों को छुटकारा दिला रहे हैं, उनकी अगुवाई कर रहे हैं, उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहे हैं, रक्षा कर रहे हैं और अनुशासित कर रहे हैं। भजन संहिता में विशेष रूप से परमेश्वर के प्रेम, भलाई और विश्वासयोग्यता का चित्रण मानवीय शब्दों में किया गया है।

इन चित्रणों के बावजूद, मसीह के समय का संसार, आज के समान ही, जानने के लिये उत्सुक था कि इस सृष्टि के पीछे जो **एक** है वह विरोधी है, उदासीन है या स्नेही है। परमेश्वर के देहधारित पुत्र ने इन प्रश्नों का उत्तर दे दिया जब उसने उस सारी वस्तुओं की सृष्टि करनेवाले सर्वशक्तिमान का परिचय एक प्रेमी पिता - करुणा, बुद्धि और न्याय में सिद्ध - के रूप में दिया, जो अपनी संतानों में से प्रत्येक के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखना चाहता है।

पवित्रशास्त्र प्रकट करता है कि परमेश्वर, संसार के दोषयुक्त पिताओं से भिन्न है, वह भरोसे के लायक, विश्वासयोग्य, उपलब्ध, समझदार, सशक्त, और दोष न लगानेवाला है। वह हमारे संघर्षों की ओर करुणा तथा अत्यंत चिंता से देखता है, और बुराई का विरोध करने तथा भलाई करने के हमारे अल्प प्रयास के कारण वह उत्तेजित होता है। अपने आत्मा के द्वारा, वह सहायता के लिये अपना अनुग्रह प्रदान करता है और हमें पाप के दबाव से ऊपर उठाता है। अपनी प्रत्येक संतान की ओर उसके विचार और आंतरिक मनोवृत्ति भली, कोमल, दयापूर्ण, संवेदनशील और स्नेहमय हैं। अपने

प्रेम में, वह सर्वदा उन बातों का कड़ा विरोध करता है जो हमारे जीवन के लिये विध्वंसक हैं, परन्तु किसी भी परिस्थिति में अपनी उपस्थिति में हमारा स्वागत करता है कि सहानुभूति-पूर्वक हमारी सुने। वह तुनक-मिज़ाजी या सनकी नहीं है परन्तु सुसंगत एवं समान स्वभाव का है।

परमेश्वर हमारा पिता है यह सम्पूर्ण कल्पना अविश्वसनीय प्रेम से भरी है और हमारी उस एक नितांत आवश्यकता को पूरा करती है कि कोई हमें, हमारी सारी कमियों के साथ, पूर्ण रीति से जाने और हम से पूर्ण प्रेम करे। उड़ाऊ पुत्र जैसे दृष्टांत को सिखाने के द्वारा यीशु ने प्रदर्शित किया कि जब हमने अपने कामों के द्वारा परमेश्वर का दिल तोड़ दिया हो तब भी वह अपने पश्चात्तापी संतान को क्षमा करते हुये उसे बाहें फैलाकर, हार्दिक स्वागत के साथ स्वीकार करेगा।

परमेश्वर के साथ उसके प्रिय और उसका स्नेह मिलनेवाली संतान जैसा सम्बन्ध स्थापित करना एक महान सौभाग्य है और जीवन में सुरक्षा का गहरा भाव और तृप्ति लाता है। परमेश्वर को एक सिद्ध स्वर्गीय पिता के रूप में जानने संबंधित बाइबलीय सच्चाइयों को देखते हुये हम अपने प्रभु की प्रार्थना के अध्ययन का आरंभ करेंगे।

१. यीशु अपने प्रभावी प्रार्थना के उदाहरण का आरंभ कैसे करता है?

मत्ती 6:9

२. पुराने नियम के नीचे दिये हवाले परमेश्वर के पितृत्व का वर्णन किस प्रकार करते हैं?

भजन संहिता 68:5

यशायाह 64:8

३. मानवीय पिता के वे कौन-से नकारात्मक गुण हैं जो हम अनजाने ही परमेश्वर में भी होंगे यह सोच लेते हैं?

४. परमेश्वर को प्रेमी स्वर्गीय पिता के रूप में जानने के लिये इन भ्रान्त धारणाओं को दूर करना और बाइबल में प्रकट किये गये उसके गुणों को, मुख्यत: उसके प्रेम को, पूर्णरूपेण समझ लेना आवश्यक है। बाइबल घोषित करती है कि परमेश्वर प्रेम है (1 यूहन्ना 4:8 ख)। निम्नलिखित लेखांश परमेश्वर के प्रेम का वर्णन कैसे करता हैं?

1 कुरिन्थियों 13:4-8 क

५. परमेश्वर के प्रेम का सब से बड़ा प्रमाण हमारे बुरे कामों का दण्ड़ सह लेने की उसकी चाहत में है। नीचे दिये वचन क्या घोषित करते हैं?

यूहन्ना 3:16-17

सन्दर्भ: टिप्पणी 2, *"मसीह को क्यों मेरे बदले में अपना प्राण देना पड़ा?"* पृष्ठ 12

६. क) परमेश्वर के साथ पिता जैसा व्यक्तिगत सम्बन्ध प्राप्त करने के लिये हमें क्या करना अवश्य है?
यूहन्ना 1:12-13 (<u>*उसे*</u> मसीह यीशु की ओर संकेत करता है; तुलना कीजिये- गलातियों 3:26)

टिप्पणी: मसीह को *'ग्रहण करने'* का संकेत मसीह को अपने जीवन में आने का निमंत्रण देने की ओर है; *'उसके नाम पर विश्वास रखना'* में अपने जीवन का नियंत्रण करने हेतु उस पर भरोसा रखना सम्मिलित है।

ख) मसीह को ग्रहण करने और उसके द्वारा पिता के पास आने में और क्या-क्या सम्मिलित है?

प्रेरितों के काम 3:19

टिप्पणी: पश्चात्ताप में, अपने पापों के लिये खेदित होना और स्वयं से हटकर परमेश्वर की ओर लौटना सम्मिलित है।

७. जब हम उसके पुत्र, यीशु मसीह, में अपना विश्वास रखते हैं, तब पिता हमें अनन्त जीवन के साथ और क्या देता है?

रोमियों 8:15-16

यूहन्ना 14:23

यूहन्ना 16:23ख

८. पिता का अपनी संतानों के प्रति अपरिवर्तित, असीम (शर्तरहित) प्रेम दर्शाने के लिये यीशु ने एक दृष्टांत बताया। पढ़िये: लूका 15:11-24

क) पुत्र ने सम्पत्ति में से अपने भाग की तथा अपनी स्वतंत्रता की मांग की तो पिता ने उसका प्रत्युत्तर कैसे दिया?

ख) अपने पुत्र के व्यवहार के कारण पिता ने संभवत: क्या अनुभव किया होगा?

ग) पुत्र ने किस बात को पूर्ण रूप से समझा?

९. क) पिता ने अपने पुत्र को कैसे ग्रहण किया (15:20)?

ख) पुत्र की मन:स्थिति कैसी थी (15:21)?

ग) पिता ने जो हृदय वेदना अनुभव की थी उसके बावजूद उसने कैसी प्रतिक्रिया दिखाई (15:22-24)?

१०. यीशु ने इस दृष्टांत में हमारे स्वर्गीय पिता के गुणों का कौन-सा सुखद पहलू प्रकट किया है? यह कहानी हमें किस बात के लिये निश्चित करती है जब हम टूटा पश्चात्तापी हृदय लेकर पिता के पास आ जाते हैं?

सन्दर्भ: टिप्पणी 3, *बड़ा भाई,* पृष्ठ 13

११. परमेश्वर के प्रेम को समझने के साथ ही, यह समझना भी महत्वपूर्ण है कि वह हमारे जीवन की प्रत्येक बात को देखता है और हमें पूर्ण रूप से समझता है – उससे भी बेहतर जितना हम स्वयं को समझते हैं। वह हमारी रचना को जानता है और यह भी कि हम ऐसे क्यों हैं जैसे हम हैं। निन्मलिखित लेखांश हमें परमेश्वर की समझ के विषय में क्या बताते हैं?

भजन संहिता 147:5ख

भजन संहिता 139:1-4

१२. क) इसलिये कि हमारा स्वर्गीय पिता हमें और सारी बातों को पूर्णत: समझता है, हम हियाव के साथ क्या कर सकते हैं?

इब्रानियों 4:16

ख) यद्यपि हमारे विषय में जो सब से बुरा है वह भी परमेश्वर जानता है तौभी हमें किस बात का आश्वासन दिया गया है?

रोमियों 8:31ख -32

रोमियों 8:38-39

१३. जैसे ही हम प्रभु की प्रार्थना आरम्भ करते हैं, "हे हमारे पिता," हम 1 यूहन्ना 3:1 के अनुसार परमेश्वर को किस बात के लिये धन्यवाद दे सकते हैं?

सा रां श

१४. परमेश्वर को स्वर्गीय पिता कहने के द्वारा हमारे प्रार्थना के जीवन में क्या वातावरण उत्पन्न होता है?

१५. इस पाठ से आपको पिता के गुणों के विषय में स्पष्ट रूप से क्या दिखाई देता है?

१६. क्यों पिता के प्रेम का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन मसीह यीशु में मिलता है?

१७. परमेश्वर को पिता के रूप में जानना आपके जीवन की गहरी आवश्यकताओं को किस प्रकार पूरा कर सकता है?

टिप्पणी: क्या आपको, परमेश्वर पिता है इस कल्पना को समझने में कठिनाई होती है? कदाचित आप एक क्षण लेना चाहेंगे कि परमेश्वर से कहें कि वह आप पर अपने गुणों को, विशेषकर उसका प्रेम, समझदारी तथा क्षमा को, प्रकट करे।

सन्दर्भ: ***गॉड इज ईजि टु लिव विद,*** पृष्ठ 13

परमेश्वर एक सिद्ध स्वर्गीय पिता है यह खोजने में सहायक कुछ पुस्तकें:
व्हाट इज द फादर लाइक? लेखक - डब्ल्यु. फिलिप केलर
31 डेज़ आफ प्रेज़, लेखिका - रूत मेयर्स

अंतिम टिप्पणी

जैसे कि हम ने ऊपर प्रश्न 6 में देखा है, परमेश्वर प्रतीक्षा करता है कि हम उसे आमंत्रित करें कि वह उसका जीवन हमारे साथ हृदय स्तर पर बांटे। नया नियम स्पष्ट करता है कि परमेश्वर के साथ एक प्रेमी स्वर्गीय पिता के रूप में व्यक्तिगत सम्बन्ध उसके पुत्र मसीह यीशु में विश्वास से आरम्भ होता है (यूहन्ना 1:12; गलातियों 3:26)। प्रकाशितवाक्य 3:20 में, यीशु हमारे जीवन में आने की उसकी इच्छा व्यक्त करता है: "देख, मैं द्वार पर खड़ा हुआ खटखटाता हूं; यदि कोई मेरा शब्द सुनकर द्वार खोलेगा, तो मैं उसके पास भीतर आकर उसके साथ भोजन करूंगा, और वह मेरे साथ।" यदि आपकी इच्छा है कि यीशु को अपने जीवन में आमंत्रित करने के द्वारा उसमें अपना विश्वास रखें, तो निम्नलिखित प्रार्थना आपकी सहायता कर सकती है कि आप अपनी इच्छा उस पर व्यक्त करें:

प्रभु यीशु, मैं अपने जीवन का द्वार तेरे लिये खोलता हूं। कृपया उस पाप को क्षमा कर जो मुझे तेरी उपस्थिति में लज्जित करता है। मैं तेरा धन्यवाद करता हूं क्योंकि तू ने क्रूस पर मेरे पापों का दण्ड़ सह लिया इसी कारण से यह संभव है। मेरे जीवन में आ और मुझे वैसा व्यक्ति बना जैसा बनने के लिये तू ने मेरी सृष्टि की है। जैसे कि मैं तुझ में विश्वास रखता हूं, मुझे अनन्त जीवन देने के लिये धन्यवाद। आमीन।।

सन्दर्भः *रोमियों 3:23-26; 6:23; कुलुस्सियों 2:13-14*

यदि आपने यह प्रार्थना की है, तो परमेश्वर प्रकाशितवाक्य 3:20 (ऊपरोक्त), इब्रानियों 13:5ख तथा 1 यूहन्ना 5:11-13 में आपसे क्या प्रतिज्ञा करता है?

- परमेश्वर के साथ जीना सरल है -

ए. डब्ल्यु टोझर की पुस्तक **"गॉड इज ईजि टु लिव विद"** से लिया गया उद्धरणः

हमारे आत्मिक कल्याण के लिये यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि हम अपने मनों में सर्वदा परमेश्वर के विषय में सही धारणा रखें। यदि हम उसे एक अलग-थलग और बड़ी मांगे रखनेवाला सोचते हैं तो हमारे लिये उससे प्रेम करना असम्भव होगा, और हमारे जीवन दास-सदृश्य भय से पीड़ित रहेंगे। फिर से, यदि हम उसे एक दयालु, सहानुभूतिपूर्ण सोचेंगे तो हमारा सम्पूर्ण भीतरी (व्यक्तिगत) जीवन उस कल्पना का प्रतिबिंब देगा।

सच्चाई तो यह है कि परमेश्वर सारे व्यक्तियों में सर्वाधिक आकर्षक है और उसकी सेवा एक अकथनीय सुख है। वह सम्पूर्ण प्रेम है, और वे जो उस पर भरोसा रखते हैं उन्हें कभी भी उस प्रेम को छोड़ और किसी बात को जानने की आवश्यकता नहीं होती। वह न्यायी है, निश्चय ही, और वह पाप को अनदेखा नहीं करेगा; परन्तु अनन्त वाचा के लहू के द्वारा वह हमारे साथ ठीक ऐसे व्यवहार कर सकता है जैसे कि हमने कभी पाप किया ही नहीं। विश्वास करनेवाले मनुष्यों की ओर उसकी दया हमेशा न्याय पर जयवंत होगी।

परमेश्वर की सहभागिता वर्णन से बाहर आन्ददायक है। वह उनके साथ जिनका उसने उद्धार किया है एक सरल, बाधारहित सहभागिता के साथ गहरा आत्मिक सम्बन्ध रखता है जो आत्मा के लिये शान्तिपूर्ण और लाभदायक है। वह न तो भावुक है न ही स्वार्थी, और न ही तुनकमिज़ाज है। वह आज जो है वैसे ही हम उसे कल भी और अगले दिन भी और अगले वर्ष भी पायेंगे। उसे प्रसन्न करना

कठिन नहीं है, भले ही उसे सन्तुष्ट करना कठिन हो सकता है। वह हम से मात्र उसी की अपेक्षा करता है जो उसने पहले हमें उपलब्ध कराया है। वह त्रुटियों को अनदेखा करने में शीघ्र है जब वह यह जानता है कि हम उसकी इच्छा पूरी करना चाहते है। वह हम से हमारे लिये प्रेम करता है और हमारे प्रेम का मूल्य नयी बनाई दुनियाओं की आकाशगंगाओं से भी अधिक आंकता है।

यह कितना अच्छा होगा यदि हम यह जान सकें कि परमेश्वर के साथ जीना कितना सरल है। वह हमारी रचना को स्मरण रखता है और जानता है कि हम मात्र धूल ही है। हम में से कुछ धार्मिक रीति से आशंकित और संकोची होते हैं क्योंकि हम जानते हैं कि परमेश्वर हमारे हर विचार को देखता है और हमारे हर मार्ग से परिचित है। हमें इसकी आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर सारे धीरज की सम्पूर्णता है और करुणामय सदिच्छा का सार है। हम उत्तेजित होकर स्वयं को भला बनाने का प्रयास करने के द्वारा नहीं परन्तु स्वयं को अपनी सारी त्रुटियों के साथ उसकी बाहों में डाल देने के द्वारा और वह सब कुछ समझता है और फिर भी हम से प्रेम करता है ऐसा विश्वास करने के द्वारा उसे सर्वाधिक प्रसन्न करते हैं।

पाठ १ टिप्पणियां

१. इव्हरेट् एल. फुलम, *लिविंग द लॉ:र्डस् प्रेअर,* पृष्ठ 6

२. **"मसीह को क्यों मेरे बदले में अपना प्राण देना पड़ा?"** यह मसीही विश्वास के सर्वाधिक महत्वपूर्ण किंतु बहुत कम समझे गये प्रश्नों में से एक है। बाइबल के विभिन्न शब्दों के निम्नलिखित स्पष्टीकरण इस प्रश्न का उत्तर देते हैं:

क) प्रायश्चित यह बाइबल का वह शब्द है जिसका अर्थ "सन्तुष्टि" है और वह परमेश्वर की सन्तुष्ट होने की धार्मिक मांग की ओर संकेत करता है। परमेश्वर अपने धर्मी तथा न्यायी होने के गुणों के साथ, जिसे मनुष्य ने उसकी इच्छा का जान-बूझकर उल्लंघन करने के द्वारा न्यायसंगत रीति से आघात पहुंचाया है, समझौता नहीं करेगा। परन्तु परमेश्वर के प्रेम के गुण ने उसे प्रेरित किया कि मनुष्य को वापस परमेश्वर की सहभागिता में लाने के लिये उसके पूर्ण धर्मी और न्यायी होने के गुणों के साथ *समझौता किये बिना* उपाय उपलब्ध कराये। परमेश्वर के पवित्रता के गुण की मांग थी कि मनुष्य के पापों का दाम चुकाया जाये। इसलिये परमेश्वर अपने पुत्र मसीह यीशु के व्यक्ति-रूप में होकर जगत में आया। इसलिये कि मसीह बिना पाप के पैदा हुआ था, और उसने कभी कोई पाप नहीं किया था, जब उसने क्रूस पर स्वेच्छा से हमारे पापों के लिये अपना प्राण दिया तब वह इस

योग्य था कि मनुष्यजाति पर के परमेश्वर के पवित्र क्रोध को सह ले (देखें – उत्पत्ति 2:16–17; 3:6; 23–24; रोमियों 5:6, 15, 17)। ऐसा करने से उसने मनुष्य के पाप के विरुद्ध परमेश्वर के पवित्र स्वभाव की न्यायसंगत मांग को "सन्तुष्ट" किया। इस कार्य ने परमेश्वर के प्रेम को स्वतंत्र कर दिया कि वह उन मनुष्यों पर अनुग्रह की वर्षा करे जो उसके उद्धार के वरदान को स्वीकार करते हैं। इस प्रकार, परमेश्वर "आप ही धर्मी ठहरे, और जो यीशु पर विश्वास करे उसका भी धर्मी ठहरानेवाला हो" (रोमियों 3:26)।

ख) धर्मी ठहराया जाना का संकेत परमेश्वर का हमें हमारे पापी होने पर भी अपनी दृष्टि में "दोषी नहीं" तथा धर्मी ठहराना की ओर है। परमेश्वर ऐसा कर सकता है इसका कारण मनुष्य के बदले में मसीह यीशु का जीवन तथा मृत्यु है (रोमियों 3:23; 6:23)। जब परमेश्वर किसी मनुष्य को अपनी दृष्टि में धर्मी ठहराता है तो वह वैसा उस **एक** के जीवन तथा मृत्यु के कारण करता है जो उस मनुष्य के वास्ते में कार्य कर रहा था। "प्रभु यीशु .... वह हमारे अपराधों के लिए पकड़वाया गया, और हमारे धर्मी ठहरने के लिए जिलाया भी गया" (रोमियों 4:24–25)। जब हम मसीह यीशु में विश्वास रखते हैं कि वह हमें हमारे पापों से बचाये तब परमेश्वर हमें धर्मी या 'दोषी नहीं' और धार्मिक घोषित करता है। हम मसीह की मृत्यु के द्वारा धर्मी ठहराये गये हैं जिसने हमारे पापों का दण्ड चुका दिया, और हम मसीह के जीवन के द्वारा धर्मी ठहराये गये हैं जिसका धार्मिकता का जीवन भी हमारे खाते में जमा किया जाता है। यह धर्मी ठहराया जाना, जो सम्पूर्णतः परमेश्वर के अनुग्रह के द्वारा है और विश्वास से प्राप्त किया जाता है, हमें परमेश्वर के घराने की एक संतान के रूप में परमेश्वर की सहभागिता में लाता है। देखिये: टिप्पणी 1, *उद्धार, मेल,* पृष्ठ 51

३. बड़ा भाई (लूका 15:25–32) यह दर्शाता है कि किस प्रकार घमंड, स्व–धार्मिकता तथा कर्मकाण्डवादी मनोवृत्ति हमें अपने स्वर्गीय पिता को जानने से रोकती है। वह व्यक्ति जो परमेश्वर को एक रूखा, कठोर और अत्यधिक मांग करनेवाला के रूप में देखता है वह उसके पिता–समान प्रेम, करुणा, उदारता तथा क्षमाशीलता को नहीं देख सकता। वह परमेश्वर से हाथ भर की दूरी रखता है जैसे कि वह जेठा पुत्र अपने पिता से रखा था। परमेश्वर के गुणों को वैसे ही जानना महत्वपूर्ण है जैसे उसके वचन में उसके उस पुत्र में प्रकट किया गया है जो अपने पिता के तत्व की सिद्ध छाप था (इब्रानियों 1:1–3)।

पाठ २

स्वर्ग कैसा है

"हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है. . ."

स्वर्ग का उल्लेख, बाइबल की 66 पुस्तकों में, 400 से अधिक बार हुआ है। कभी-कभी वह पृथ्वी के वातावरण की ओर संकेत करता है। "जिस प्रकार से वर्षा और हिम आकाश से गिरते हैं" (यशायाह 55:10)। कभी-कभी स्वर्ग शब्द का प्रयोग अंतरिक्ष के संबंध में किया गया है। "आकाश ईश्वर की महिमा वर्णन कर रहा है..." (भजन संहिता 19:1)। [लेखिका द्वारा प्रयुक्त अंग्रेजी बाइबल में इन वचनों में *आकाश* के स्थान पर *स्वर्ग* शब्द आया है- अनुवादिका] निश्चय ही परमेश्वर इन स्थानों में है क्योंकि वह आत्मा और सर्वव्यापी है। यिर्मयाह 23:24 में परमेश्वर की घोषणा है: "क्या स्वर्ग और पृथ्वी दोनों मुझ से परिपूर्ण नहीं हैं?"

परन्तु प्रभु की प्रार्थना में यीशु जिस स्वर्ग की ओर संकेत करता है, जब वह प्रार्थना करता है, "हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है. . .," वह पवित्रशास्त्र में स्वर्ग शब्द का तीसरा प्रयोग है। यह वह स्थान है जहां परमेश्वर निवास करता है और जहां से वह अनंतकालिक राज्य करता है। नया नियम में, उसका वर्णन कभी-कभी स्वर्गीय देश, नया यरूशलेम, परमेश्वर की संतानों के लिये विशेष रीति से तैयार किये गये एक घर के रूप में किया गया है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसे हम देख नहीं सकते, इस कारण उसकी कल्पना करना कठिन है, और इस धारणा को अनेक प्रश्न घेरे रहते हैं। अपनी पुस्तक 'लिविंग द लार्ड्स प्रेयर' में इव्हरेट फुलम कहते हैं:

> *कल्पना कीजिये कि आपके सामने एक ब्लैक-बोर्ड है, और हम ने उसके ऊपरी और निचले किनारे के बिल्कुल मध्य में एक रेखा खींची है। रेखा के नीचे का सब कुछ उस संसार का प्रतीक है जो हमारे अनुभव के दायरे में अर्थात् हमारे मानवीय तर्क, और कल्पना की भी संपूर्ण सीमा के भीतर है। तब हम प्रभु परमेश्वर को उस रेखा के ऊपर, मनुष्य के ज्ञान, बुद्धि, और समझ की पहुँच से परे रखते हैं। हमारे सीमित मन उस क्षेत्र का रहस्य समझ नहीं पायेंगे, हम चाहे कितना भी कठिन प्रयास क्यों न कर लें।*
>
> *अब यह निश्चय ही एक सही चित्र होता यदि यह विस्मयकारक सच्चाई नहीं होती, जो मसीही विश्वास की सर्वाधिक केंद्रीय तथा गंभीर शिक्षा है, कि परमेश्वर*

इतिहास के एक वास्तविक समय विशेष में उस रेखा के नीचे उतर आया और उसने हमारे अनुभव के संसार में प्रवेश किया। इस असीमित ब्रह्मांड में, जो आकाश गंगाओं तथा अनेक तेजस्वी तारों, नक्षत्रों और ऐसी रचनाओं से भरा है जो हमारी निरंकुश कल्पनाओं से भी परे है, यह नन्हा छोटा भूमण्डल जिस पर हम वास करते हैं जे. बी. फिलिप्प्स् के शब्दों में "द विजिटेड प्लेनेट" (भेंट किया गया ग्रह) बन गया। परमेश्वर स्वयं, अपने पुत्र के व्यक्ति-रूप में, हमारे मध्य आया।[1]

यीशु, परमेश्वर का देहधारी वचन (यूहन्ना 1:1 और आगे), अनदेखे संसार की सच्चाइयों को हम पर प्रकट करने आया, परन्तु उसे भी मनुष्यजाति को उन शब्दों में जिन्हें हम समझ सकते हैं स्पष्ट करना कठिन गया। मानवीय पिताओं के साथ के हमारे अनुभवों के संदर्भ में, परमेश्वर का वर्णन करने के लिये *पिता* शब्द अपर्याप्त है, परन्तु *स्वर्ग में* यह वाक्यांश उसे असीमित तथा अनंतकालिक क्षेत्र में रखता है . . . इस संसार की उन परिस्थितियों/शर्तों से पूर्णतया सीमारहित तथा स्वतंत्र जो हम मानवजाति को सीमित करती हैं। वह स्वर्गीय है, पृथ्वी पर का नहीं। यीशु चाहता है हम देखें कि परमेश्वर भौतिक सृष्टि से परे, सर्वशक्तिमान (सर्व-सामर्थी), सर्वज्ञानी (सब-जाननेवाला), तथा सर्वव्यापी (सब स्थानों में उपस्थित) है, भले ही हमारा मनुष्यत्व उन वर्णनों को पूरी तरह समझने में हमें असमर्थ बनाता है।

"हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है" इन शब्दों में यीशु प्रकट करता है कि यह **एक** जो भौतिक सृष्टि से परे, स्वर्ग में सिंहासन पर विराजमान है, हम से अत्यधिक प्रिय संतानों के रूप में संबंध बनाना चाहता है। उसका असीम प्रेम हमारे अपने सांसारिक पिता तथा औरों से मिले हुये भावनात्मक घावों को चंगा कर सकता है, और उसकी बुद्धिमत्ता पर भरोसा किया जा सकता है। वह उस स्थान से जिसे स्वर्ग कहा जाता है, जो पवित्रशास्त्र के अनुसार एक दिन विश्वासी का अनंतकालिक घर होगा, सब बातों पर राज्य करता है। इस स्थान का विवरण यशायाह और प्रेरित यूहन्ना द्वारा देखे गये दर्शनों में कुछ ऐसा प्रतीत होता है जैसे हम आधुनिक सिनेमा के परदे पर देखेंगे . . . लगभग कल्पना से बाहर! जो उन्होंने देखा था उसके वर्णन हेतु मानवीय भाषा का प्रयोग करने में उन्हें कठिनाई हुई थी।

परन्तु यीशु ने सामान्य शब्दों में प्रतिज्ञा की है कि जो यीशु में विश्वास करते हैं वे वहां होंगे और यह कि वह प्रत्येक के लिये स्वर्ग में जगह तैयार करने गया है। इसलिये कि उसका पुनःरुत्थान इतिहास की सच्चाई है, हम जान सकते हैं कि यीशु परमेश्वर का पुत्र था, और उसकी वे प्रतिज्ञाएं जो स्वर्ग तथा वहां के हमारे अनंतकालिक भविष्य के विषय में हैं, पूरी की जाएंगी।

इब्रानियों 11:1 कहता है, "अब विश्वास आशा की हुई वस्तुओं का निश्चय, और अनदेखी वस्तुओं का प्रमाण है।" "हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है," यह प्रार्थना करना सिखाने में यीशु हमें प्रोत्साहित करता है कि प्रार्थना का आरंभ इस विश्वास से करें कि पिता अपने सिंहासन पर है, और हम एक दिन उसे आमने-सामने देखेंगे। इस पाठ में हम उन कुछ सच्चाइयों को देखेंगे जो बाइबल हमें स्वर्ग के विषय में बताती है।

१. क) यीशु मत्ती 6:9 में परमेश्वर का वर्णन कैसे करता है?

ख) यीशु द्वारा परमेश्वर का *एक स्वर्गीय* पिता के रूप में किया हुआ वर्णन परमेश्वर को किस प्रकार मानवीय पिताओं से अलग करता है? (व्याख्या में दी गई टिप्पणियों को भी देखिये।)

२. क) स्वर्ग तथा हमारे स्वर्गीय पिता के विषय में कुछ सामान्य पूर्वकल्पित धारणाएं कौन-सी हैं?

ख) हमारी अनदेखे संसार से संबंधित समझ के विषय में 1 कुरिन्थियों 13:12 क्या कहता है?

३. क) पुराने नियम के ये लेखांश स्वर्ग के विषय में क्या प्रकट करते हैं?

भजन संहिता 103:19

भजन संहिता 93:2

ख) जो परमेश्वर के सिंहासन के चारों ओर हैं उनसे उसकी आराधना कराने के लिये कौन-सी बातें सर्वदा कारण बनेगी?

भजन संहिता 89:14

४. इब्रानियों 1:2-3 यीशु मसीह के विषय में क्या बताता है?

संदर्भ: टिप्पणी 2, *यीशु परमेश्वर के दाहिने हाथ*, पृष्ठ 19

५. क) यीशु विश्वासी से क्या प्रतिज्ञा करता है?

यूहन्ना 11:25-26

यूहन्ना 14:1-3

ख) इस प्रतिज्ञा में फिलिप्पियों 3:20-21 क्या जोड़ता है?

६. बाइबल हमें बताती है कि परमेश्वर नये आकाश तथा नयी पृथ्वी की रचना करेगा (2 पतरस 3:10,13; प्रकाशितवाक्य 21:1), और सारी सृष्टि को छुटकारा प्राप्त होगा और वह सड़न तथा संघर्ष से मुक्त की जाएगी। निम्नलिखित वचन इस छुटकारे का वर्णन कैसे करते हैं?

रोमियों 8:19-21

यशायाह 11:6-9

७. यीशु की पुन:रुत्थित देह हमें इसका अनुमान देती है कि हमारी अनंतकालिक देह कैसी होगी, देह जो सड़न या बीमारी से प्रभावित नहीं होगी परन्तु अनंतकाल तक जीवित रहने के लिये बनी होगी। आप निम्नलिखित वचनों में उसकी पुन:रुत्थित देह के विषय में क्या देखते हैं?

लूका 24:15-16, 30-31, 36-43, 51

प्रेरितों के काम 1:9-11

८. आप निम्नलिखित वचनों से नये आकाश और नयी पृथ्वी के विषय में, जहां विश्वासी सर्वदा के लिये वास करेंगे, क्या ज्ञान प्राप्त करते हैं?

प्रकाशितवाक्य 21:1, 3-5

प्रकाशितवाक्य 21:10-21

प्रकाशितवाक्य 21:22-27

प्रकाशितवाक्य 22:1-5

टिप्पणी: *मेम्ना* यह शब्द यीशु के लिये प्रयोग किया गया है (निर्गमन 12; 1 कुरिन्थियों 5:7; यूहन्ना 1:29; यशायाह 53:7)।

संदर्भ: टिप्पणी 3, *स्वर्ग पर अनुचिंतन,* पृष्ठ 20

९. जब हम प्रार्थना करते हैं, "हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है," हम किस बात के लिये परमेश्वर की स्तुति कर सकते हैं?

1. पतरस 1:3-4

टिप्पणी: *आशा*, बाइबल के अनुसार निश्चय है, न कि मात्र इच्छुक आशावादिता।

निर्गमन 15:18

सा रां श

१०. यदि कोई आपसे पुछे तो आप उसे स्वर्ग का वर्णन कैसे करेंगे? इस पाठ से स्वर्ग की कौन-सी विशेषताएँ आपको स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं?

११. क्या आपको निश्चय है कि आप स्वर्ग जायेंगे? यूहन्ना 3:16 तथा यूहन्ना 1:12 के अनुसार इसके लिये किसी को क्या करना अवश्य है?

टिप्पणी: यदि आप इस बात का निश्चय कर लेना चाहते हैं कि आप स्वर्ग जाएंगे, तो पृष्ठ 11 पर दी गई प्रार्थना, और उसके बाद दिये गये आश्वासन के वचन, सहायक हो सकते हैं।

१२. जब कि आप "हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है. . ." यह प्रार्थना करते हैं, आपको क्या स्मरण कराया जाता है?

पाठ २, टिप्पणियां

१. इव्हरेट फुलम, *लिविंग द लार्ड्स प्रेयर,* पृष्ठ 25

२. *यीशु परमेश्वर के दाहिने हाथ* । पुराना तथा नया नियम दोनों प्रकट करते हैं कि यीशु, परमेश्वर के साथ, अनंतकाल तक राज्य करेगा। यशायाह में की गयी मसीह से संबंधित भविष्यद्वाणी व्यक्त करती है: "क्योंकि हमारे लिये एक बालक उत्पन्न हुआ, हमें एक पुत्र दिया गया है; और *प्रभुता उसके कांधों पर होगी*, और उसका नाम अद्भुत युक्ति करनेवाला पराक्रमी परमेश्वर, अनन्तकाल का पिता, और शान्ति का राजकुमार रखा जाएगा" (यशायाह 9:6; विशेष बल मेरे द्वारा दिया गया है)। "तब दया के साथ एक *सिंहासन* स्थिर किया जायेगा और उस पर दाऊद के तम्बू में सच्चाई के साथ एक विराजमान होगा जो सोच विचार कर सच्चा न्याय करेगा और धर्म के काम पर तत्पर रहेगा" (यशायाह 16:5; विशेष बल मेरे द्वारा दिया गया है)।

नया नियम में, जिब्राईल स्वर्गदूत ने मरियम को सूचना दी, "वह महान होगा और परमप्रधान का पुत्र कहलाएगा; और प्रभु परमेश्वर उसके पिता दाऊद का *सिंहासन* उसको देगा। और वह याकूब के घराने पर सदा राज्य करेगा; और उसके राज्य का अन्त न होगा।" (लूका 1:32-33, विशेष बल मेरे द्वारा दिया गया है)।

यीशु ने भी पिता के पास से आने का तथा पिता के साथ एक होने का दावा किया था, "मैं पिता से निकल कर जगत में आया हूं, फिर जगत को छोड़कर पिता के पास जाता हूं" (यूहन्ना 16:28)। "मैं और पिता एक हैं . . . जिसने मुझे देखा है उसने पिता को देखा है . . . पिता मुझ में रहकर अपने काम करता है" (यूहन्ना 10:30; 14:9-18)। इब्रानियों का लिखनेवाला कहता है, ". . . इन दिनों के अन्त में हम से पुत्र के द्वारा बातें कीं, जिसे उसने सारी वस्तुओं का वारिस ठहराया और उसी के द्वारा उसने सारी सृष्टि रची है। वह उसकी महिमा का प्रकाश, और उसके तत्व की छाप है, और सब वस्तुओं को अपनी सामर्थ्य के वचन से संभालता है। वह पापों को धोकर ऊंचे स्थानों पर महामहिमन् के दाहिने जा बैठा; . . . परन्तु पुत्र से कहता है कि हे परमेश्वर, तेरा सिंहासन युगानुयुग रहेगा; तेरे राज्य का राजदण्ड न्याय का राजदण्ड है।" (इब्रानियों 1:2-3, 8)।

प्रकाशितवाक्य 11:15 व्यक्त करता है, ". . . तो स्वर्ग में इस विषय के बड़े बड़े शब्द होने लगे कि जगत का राज्य हमारे प्रभु का, और उसके मसीह का हो गया और वह युगानुयुग राज्य करेगा।" (तुलना कीजिये: प्रकाशितवाक्य 5:13)।

३. *स्वर्ग पर अनुचिंतन* । फिलिप केलर अपनी पुस्तक *अ लेमैन लुक्स एट द लार्ड्स प्रेयर*, पृष्ठ 33-42, में स्वर्ग में उपलब्ध निम्नलिखित स्वतंत्रता तथा लाभ की सूची देते हैं।

चौदह बातें जिनसे हम स्वर्ग में स्वतंत्र किये जायेंगे :

१. शैतान के हमलों से स्वतंत्रता -- चतुराई से दोषारोपण करना और गुप्त धोखा देना, प्रलोभन तथा कपटपूर्ण चालबाजी, संदेह या प्रलोभन और नहीं होंगे।

२. प्रिय जनों से दूर होने के तनाव से स्वतंत्रता। हमें पूर्ण संतोष होगा, बेचैन आत्माएं और नहीं होंगी; परमेश्वर के साथ चैन से होंगे।

३. मनोव्यथा, निराशा, हताशा के आँसुओं से स्वतंत्र; पीड़ादायी वेदनाओं के क्षण और नहीं होंगे।

४.यीशु ने क्रूस पर जो पूरा किया है उसके कारण मृत्यु और नहीं होगी -- उसकी मृत्यु उसके घर का द्वार-मार्ग थी। हमारी मृत्यु कब और कैसे होगी ऐसे अनिष्ट के पूर्वज्ञान के विचारों से स्वतंत्रता मिलेगी।

५. गलतियों, गलत मनोवृत्तियों, दयारहित शब्दों, स्वार्थी इरादों, गलत गतिविधियों के लिये खेद तथा पश्चात्ताप से स्वतंत्रता। पूर्णत: क्षमाप्राप्त। मूर्खता, दु:ख, गलत अपराधों पर खेद से स्वतंत्र। इसके बदले में, गहरी प्रसन्नता होगी।

६. सत्य की खोज और नहीं, क्योंकि हम घर पहुंच चुके होंगे कि वहां हमारे पिता को हमारे स्वागत की प्रतीक्षा करते पायें।

७. शारीरिक तथा भावनात्मक तथा आत्मिक पीड़ा से छुटकारा। दूसरों को तीव्र वेदना सहन करते देखना और नहीं होगा।

८. जब परमेश्वर के नया आकाश, नयी पृथ्वी और नये यरूशलेम का अनावरण हो चुका होगा, वहां कलीसिया-भवन या सिद्धान्तीय विभाजन नहीं होंगे, केवल सरगर्मी और प्रेम और समझ होगी जो परमेश्वर के लोगों में परमेश्वर की उपस्थिति के द्वारा उत्पन्न होगी।

९. सूर्य या चंद्रमा नहीं होगा -- समय और नहीं होगा। हम समय/पृथ्वी पर के जीवन के समय की अवधि की शर्तों से सीमित नहीं होंगे। अंतिम तिथि के पहले काम समाप्त करना, समयसारणियों, घड़ी के काटों तथा कैलेंडर् के अनुसार अपने जीवन को संगठित करते रहना और नहीं होगा। हमारे जीवन से समय भागा जा रहा है ऐसा बोध और नहीं होगा। तुरंत कार्य करने की आवश्यकता नहीं होगी -- इसके बदले में, शांति, चैन, पृथ्वी पर के सदा-हडबड़ी की रफ्तार की चिंता तथा तनाव से मुक्त उतावली-रहित जीवन होगा।

१०. वहाँ रात नहीं होगी। हमारी नयी आत्मिक देह को नींद और आरोग्यलाभ की आवश्यकता नहीं होगी जैसे हमारी शारीरिक देह को होती है।

११. अपने और दूसरों के या परमेश्वर के मध्य गलतफ़हमी और नहीं होगी। समग्र तथा पूर्ण प्रकाशन -- हम वैसे ही जानेंगे जैसे हम जाने गये हैं -- गलतफ़हमी से होनेवाले डर, संदेह, गलत फैसले, बैर, निराशा और नहीं होंगे।

१२. वहां हमारे विचारों या नैतिक जीवन को भ्रष्ट करनेवाली कोई बात नहीं होगी। वहां कुछ भी हमें परमेश्वर की भक्ति से दूर नहीं ले जायेगा। जीविका को कमाने के लिये होनेवाले संघर्ष का प्रभुत्व और नहीं होगा -- हमारे अप्रत्याशित सांसारिक प्रवास के तनाव और दबाव से छुटकारा। संसार हमें परास्त नहीं कर सकता।

१३. औरों के लिये भले दिखाई देने के मानसिक तनाव और नहीं होंगे; त्रुटियों को ढकने के मुखौटे या झूठे बाहरी दिखावे और नहीं होंगे। धोखा, झूठ, बेईमानी, छल और नहीं होंगे। हम परमेश्वर तथा औरों के सामने केवल हम स्वयं ही होंगे।

१४. पाप तथा बुराई को प्रभावित करनेवाली शक्ति से मुक्त, धर्म के मार्गों में

स्वतंत्रता से चलते होंगे। आगे को पाप के भार के तले दबे नहीं होंगे -- चिंतामुक्त स्वच्छन्दता से उल्लासित होंगे।

स्वर्ग के सात लाभ जो परमेश्वर की उपस्थिति संभव करायेगी

१. संतोष तथा शान्ति, संतुष्टि तथा विश्राम, निरंतर पूर्ण संतोष।

२. जीवन की भरपूर गुणवत्ता -- संपूर्ण प्रेम, इमानदारी, सद्‌भावना और धार्मिकता।

३. संपूर्ण न्याय तथा निष्पक्षता।

४. परमेश्वर के प्रति सेवा। हमारे सारे कामों का महत्व तथा गहन अर्थ होगा क्योंकि वे ईश्वरीय होंगे -- आनन्ददायक उपक्रमों की श्रृंखलाएं जिनमें मनुष्य तथा परमेश्वर सक्रिय सहकर्मी हैं।

५. अति उत्तम सहभागिता -- हमारे स्वर्गीय पिता को आमने-सामने देखना। उसे जानने का अत्यधिक आनन्द हर एक को एकसाथ एक प्रेमी परिवार में बाँधेगा।

६. परमेश्वर तथा जीवन के हर एक पहलू का पूर्ण प्रकाशन -- सब कुछ तेजस्वी और सही। भय या अनिष्ट के पूर्वज्ञान के विचार नहीं।

७. विजय, अन्ततः विश्राम, जब हम मसीह के साथ सदा सर्वदा तक राज्य करते होंगे।

पाठ ३

परमेश्वर को जानना

“तेरा नाम पवित्र माना जाए।”

हमारे लिये कितना सरल है कि किसी अत्यावश्यक चिंता के साथ या चिंताओं की सूची के साथ, जिनके विषय में हम परमेश्वर को बताते हैं (जैसे कि वह कुछ जानता ही नहीं), उतावली से उसकी उपस्थिति में जायें और तब उसे निर्देश दें कि उनके लिये उसे क्या करना है।

परन्तु यीशु हमें सिखाता है कि प्रार्थना का आरंभ “हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है, तेरा नाम पवित्र माना जाए” से करें। इसमें सामर्थी तथा संतोषजनक प्रार्थनामय जीवन का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। हमें अपनी प्रार्थना का आरंभ अपने ध्यान को अपने स्वर्गीय पिता की ओर करते हुये, स्वयं को उसकी उपस्थिति में उपलब्ध कराते हुये, स्वयं को उसकी प्रभुसत्ता (पूर्ण प्रभुत्व) के अधीन करते हुये और वह कौन है यह स्मरण करते हुये करना चाहिये। जब हम इस प्रकार आरंभ करते हैं, तो हमें प्रार्थना में अपने निकट आने का निमन्त्रण देनेवाले प्रभु की भलाई तथा महानता की रोशनी में हमारी चिंताओं का विशाल आकार संभवतः छोटा हो जाता है।

“तेरा नाम पवित्र माना जाए” इस वाक्यांश का अर्थ क्या है? हमें इसे समझने के लिये बाइबल के इतिहास में पीछे जाना होगा। प्राचीन समय के यहूदियों के लिये परमेश्वर का नाम इतना पवित्र था कि उन्होंने उसका उच्चारण करने से इन्कार किया। जब वे पवित्रशास्त्र को ऊंची आवाज में पढ़ते थे, वे उस शब्द का उच्चार नहीं करते थे, जिसमें चार व्यंजन थे, जिसका लिप्यंतरण JHWH है, जो आगे चलकर यहोवा अथवा याह बना। जब उन्होंने संयोग से शब्द पाया तो उन्होंने उसके स्थान पर *अदोनाई (Adonai)* शब्द रखा, जिसका अर्थ ‘प्रभु’ होता है। अंग्रेजी बाइबल में आया LORD शब्द सामान्यतः JHWH का अनुवाद है।

परन्तु जब हम बाइबल में “तेरा नाम” देखते हैं, वह मात्र यहोवा की ओर संकेत नहीं करता। बाइबल के अनुसार परमेश्वर का “नाम” परमेश्वर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर का नाम जानने का अर्थ उसके गुण, उसका व्यक्तित्व, उसका स्वभाव, उसका प्रेम, उसकी दया, उसकी सामर्थ्य जानना है। उदाहरण के लिये, जब भजन लिखनेवाला कहता है, “तेरे नाम के जाननेवाले तुझ

पर भरोसा रखेंगे" (भजन संहिता 9:10), तो वह कह रहा है, 'जो सच में जानते हैं कि तू कौन और क्या है वे तुझ में अपना भरोसा रखते हैं।'

इसी प्रकार, जिस भजनकार ने लिखा है, "किसी को रथों का, और किसी को घोड़ों का भरोसा है, परन्तु हम तो अपने परमेश्वर यहोवा ही का नाम लेंगे" (भजन संहिता 20:7), वह कह रहा था कि इस्राएल ने घमंड़ किया और परमेश्वर को जानने में अपनी पहचान एवं सामर्थ्य को पाया।

परमेश्वर ने स्वयं को (परमेश्वर की) प्रेरणा से लिखे गये पवित्रशास्त्र के द्वारा तथा उसके साथ चलनेवाले लोगों के अनुभवों के द्वारा प्रकट किया है -- जैसे कि अब्राहम, मूसा, दाऊद, भविष्यद्वक्ता तथा नये नियम के प्रेरित। सर्वाधिक प्रभावशाली रीति से, परमेश्वर ने अपनी पहचान हमें अपने देहधारी पुत्र, यीशु मसीह, के द्वारा होने दी है, जो "उसके तत्व की छाप है" (इब्रानियों 1:3)।[1] जब हम इस प्रकार से प्रकट किये गये परमेश्वर के गुणों का अध्ययन करते हैं, और हम जीवन में उसके साथ-साथ चलते हैं, हम परमेश्वर के ज्ञान में बढ़ते जाते हैं जो उसके नाम को सच्चाई से पवित्र मानने के लिये आधार है।

इस कारण से, परमेश्वर के नाम को *पवित्र मानने* का अर्थ परमेश्वर जो है उसके लिये उसकी प्रशंसा करना, आदर करना, उसका भय मानना है। हम ऐसा ही करते हैं जब हम सम्पूर्ण बाइबल में देखी गई तथा अपने जीवनों में अनुभव की गई उसकी महिमा और उसकी करुणा का स्वयं को स्मरण दिलाते हुये उसकी आराधना और स्तुति करते हैं। इस पाठ में, हम प्रार्थना के इस बहुत-ही महत्वपूर्ण प्रथम चरण के संबंध में कुछ अवलोकन करेंगे।

१. क) जब हम प्रार्थना में परमेश्वर के पास आते हैं, आसानी से हमारे ध्यान का केंद्र क्या हो सकता है?

ख) परमेश्वर हम से क्या चाहता हैं कि हम अपनी चिंताओं के लिये करें?

फिलिप्पियों 4:6

२. क) हम प्रार्थना में विनतियां प्रस्तुत करने के पहले परमेश्वर के नाम को "पवित्र माने," इसका अर्थ क्या है?

ख) आपके विचार से यह क्यों महत्वपूर्ण है?

३. टीका स्पष्ट करती है कि बाइबल में परमेश्वर का नाम परमेश्वर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है। परमेश्वर का नाम जानने का अर्थ उसके गुण, उसका व्यक्तित्व, उसका स्वभाव, उसका प्रेम, उसकी दया, उसकी सामर्थ्य जानना है। इस विचार को बेहतर समझने के लिये, किसी एक व्यक्ति के विषय में सोचिये जिसे आप जानते हैं तथा प्रेम करते हैं और उस व्यक्ति का वर्णन कीजिये।

इस व्यक्ति के "नाम" को "पवित्र मानने" का अर्थ इन सारे गुणों का आदर करना और उनको स्पष्ट करना है।

४. आपकी आत्मिक यात्रा के इस क्षण में, परमेश्वर के विषय में सत्य क्या है इसके बारे में आप क्या समझते हैं? आप परमेश्वर का वर्णन कैसे करेंगे?

संदर्भः टिप्पणी 1, *परमेश्वर ने स्वयं को प्रकट किया है,* पृष्ठ 28

५. भजन संहिता 145 पवित्रशास्त्र के उन अनेक लेखांश में से एक है जो परमेश्वर के नाम को पवित्र मानते हैं। कौन से वाक्यांश उस **एक** के गुणों का तथा ऐश्वर्य का वर्णन करते हैं जो प्रेमी स्वर्गीय पिता के रूप में हमें अपने पास आने का निमन्त्रण देता है?

भजन संहिता 145:1-7

भजन संहिता 145:8-13क

भजन संहिता 145:13ख -16

भजन संहिता 145:17-21

संदर्भ: *परमेश्वर की विशेषताओं पर ऐच्छिक अध्ययन*, पृष्ठ 27

६. मसीह में प्रकट हुये परमेश्वर के तत्व (सार) का वर्णन निम्नलिखित पद किस प्रकार करते हैं?

कुलुस्सियों 1:15-17,19

संदर्भ: टिप्पणी 2, *सारी सृष्टि में पहिलौठा,* पृष्ठ 29

फिलिप्पियों 2:5-11

संदर्भ: टिप्पणी 2, *मसीह को क्यों मेरे बदले में प्राण देना पड़ा?* पृष्ठ 12

यशायाह 9:6

७. क) यीशु के "नाम" या अधिकार में प्रार्थना करना प्रभावशाली है। जब यीशु हमारे जीवन का प्रभु है, वह क्या प्रतिज्ञा करता है?

यूहन्ना 15:7

टिप्पणी: जैसे पिता का, वैसे ही यीशु का *नाम* उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सार है। यीशु के नाम में प्रार्थना करने का अर्थ उसके गुणों के अनुसार प्रार्थना करना है और इसका लक्ष्य परमेश्वर के कार्य को परमेश्वर की इच्छा के अनुसार पूरा करने की ओर होता है।

ख) यदि हम मसीह में बने रहते हैं तो हम में परमेश्वर के स्वभाव का क्या प्रमाण होता है?

यूहन्ना 15:12

८. भजन संहिता 100 किस प्रकार यीशु की शिक्षा को प्रतिबिम्बित करता है कि प्रार्थना का आरंभ परमेश्वर के नाम एवं इच्छा का आदर करते हुये किया जाये?

सा रां श

९. **क)** पवित्रशास्त्र में प्रभु के "नाम" का अर्थ क्या है?

ख) उसके नाम को "पवित्र मानने" का अर्थ क्या है?

१०. निम्नलिखित बातें किस प्रकार प्रभु के नाम को सच्चाई से "पवित्र मानने" की आपकी क्षमता को विकसित कर सकती हैं?

- बाइबल अध्ययन
- हर एक बात के लिये प्रार्थना करना (फिलिप्पियों 4:6)
- यीशु मसीह को अपने जीवन का प्रभु होने देना (यूहन्ना 15:4-7)

११. आपने इस पाठ में प्रभु की प्रार्थना के "तेरा नाम पवित्र माना जाए" इस वाक्यांश के विषय में क्या अवलोकन किया है?

परमेश्वर की विशेषताओं पर ऐच्छिक अध्ययन

उसका ऐश्वर्य: 1 इतिहास 29:12
विश्वासयोग्यता: भजन संहिता 36:5
भलाई: नहूम 1:7
अनुग्रह: रोमियों 3:23-24 (तीतुस 3:7)
परमेश्वर की करुणा और धीरज: भजन संहिता 103:8
महानता: भजन संहिता 145:3
पवित्रता: (शुद्धता, पाप से अलग) भजन संहिता 99:5 (यशायाह 5:16)
उसकी अपरिवर्तनीयता (वह बदलता नहीं): भजन संहिता 102:27 (इब्रा 13:8)

निष्पक्षता: अय्यूब 34:19 (प्रेरितों 10:34-35)
न्याय: भजन संहिता 33:5
प्रेम: यूहन्ना 3:16
दया: भजन संहिता 103:10-12 (विलापगीत 3:22-23)
सर्वसामर्थ्य (सर्व-शक्तिमान): लूका 1:37 (अय्यूब 42:2)
सर्वव्यापिता (सर्वत्र उपस्थित): भजन संहिता 139:7-10
सर्वज्ञता (सब कुछ जाननेवाला): इब्रानियों 4:13 (अय्यूब 31:4)
विशेष अनुकम्पा (चिंता):
- उपलब्ध कराना: फिलिप्पियों 4:19
- रक्षा करना: भजन संहिता 91:4
- अगुवाई करना: नीतिवचन 2:8

धार्मिकता: व्यवस्थाविवरण 32:4
पूर्णप्रभुत्व: दानिय्येल 2:20-22
उसके मार्ग और नियम: भजन संहिता 18:30; भजन संहिता 19:7-8,11
समझ: भजन संहिता 147:5 (1 इतिहास 28:9ब)
बुद्धि: यशायाह 28:29 (याकूब 1:5)

अधिक अध्ययन के लिये: द *नॉलेज ऑफ द होलि*, लेखक ए. डब्ल्यु. टोज़र; *नोइंग गॉड*, लेखक जे. आई. पेकर; *योर गॉड इज टू स्मॉल*, लेखक जे. बी. फिलिप्स

पाठ ३ टिप्पणियां

१. *परमेश्वर ने स्वयं को प्रकट किया है* – परमेश्वर ने स्वयं को पवित्रशास्त्र में उन लोगों के अनुभवों के द्वारा प्रकट किया है जो उसके साथ-साथ चलते थे। अब्राहम ने उम्र के 99 वे वर्ष में पाया कि परमेश्वर *सर्वशक्तिमान परमेश्वर* (एल शाद्दाई) है जब कि उसने 90 वर्ष की सारा को इस योग्य किया कि वह इसहाक को जन्म दे, उस वारिस को जिसकी प्रतिज्ञा बहुत समय पहले से की गई थी (उत्पत्ति 17:1)। बाद में, अब्राहम के उस प्रभावशाली वृत्तांत में, जब परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने हेतु वह अपने पुत्र को होमबलि चढ़ाने के लिये तैयार हुआ, तब जब बलि के लिये स्वयं परमेश्वर ने उपाय किया तो उस कुलपिता ने पाया कि *परमेश्वर हमारा उपाय करनेवाला* है (उत्पत्ति 22:14)। चार सौ वर्ष बाद, परमेश्वर ने स्वयं को जलती हुई झाड़ी में मूसा पर प्रकट किया कि वह एक और एकमात्र परमेश्वर, सनातन परमेश्वर, "मैं हूं" परमेश्वर, जिसका उच्चारण न कर सके ऐसे JHWH नाम का परमेश्वर है। बाद में निर्गमन के उस वृत्तांत में जब इस्राएल लोग जंगल में

फिरते थे, परमेश्वर ने स्वयं को उन पर *तुम्हारा चंगा करनेवाला यहोवा* (निर्गमन 15:25–66) तथा *यहोवा मेरा झंडा या विजय* (निर्गमन 17:14–15) के रूप में प्रकट किया। उसके बाद के समय में, सर्व प्रथम गिदोन ने प्रभु को *यहोवा शान्ति (देनेवाला)* पाया (न्यायियों 6:22–24)।

जब यशायाह ने भविष्यवाणी की: "क्योंकि हमारे लिये एक बालक उत्पन्न हुआ, हमें एक पुत्र दिया गया है; और प्रभुता उसके कांधो पर होगी, और उसका नाम *अद्‌भुत युक्ति करनेवाला पराक्रमी परमेश्वर, अनन्तकाल का पिता, और शान्ति का राजकुमार* रखा जाएगा" (यशायाह 9:6), तब उसने आनेवाले परमेश्वर के बहुत ही भिन्न प्रकटीकरण को पहले से जान लिया था। सात सौ वर्ष बाद, यूसुफ की दुविधा के समय में एक स्वर्गदूत ने उसके पास आकर उसे बताया, ". . . तू अपनी पत्नी मरियम को अपने पास ले आने से मत डर; क्योंकि जो उसके गर्भ में है, वह पवित्र आत्मा की ओर से है। वह पुत्र को जन्म देगी और तू उसका नाम यीशु रखना; क्योंकि वह अपने लोगों का उनके पापों से उद्धार करेगा" (मत्ती 1:20–21)। यीशु का अर्थ है *यहोवा उद्धार करता है* या *यहोवा उद्धार है* । पुनःरुत्थान के बाद, पतरस ने, पवित्र आत्मा से भरकर, हजारों लोगों के सामने घोषित किया: "और किसी दूसरे के द्वारा उद्धार नहीं; क्योंकि स्वर्ग के नीचे मनुष्यों में और *कोई दूसरा नाम नहीं* दिया गया, जिसके द्वारा हम उद्धार पा सकें" (प्रेरितों 4:12)। पौलुस ने घोषणा की कि परमेश्वर ने "उसको अति महान भी किया, और उसको *वह नाम दिया जो सब नामों में श्रेष्ठ है*, कि जो स्वर्ग में और पृथ्वी पर और जो पृथ्वी के नीचे हैं, वे सब *यीशु के नाम* पर घुटना टेकें" (फिलिप्पियों 2:9–10)।

पवित्रशास्त्र के उपरोक्त तथा अन्य प्रकाशनों के द्वारा हम परमेश्वर कौन है इस विषय में पढ़ते है। जब हम परमेश्वर के साथ-साथ चलते हैं, हम व्यक्तिगत रीति से उसके ज्ञान में बढ़ते जाते हैं कि वह सर्व-शक्तिमान, अनन्त, चंगा करनेवाला, विजय तथा शान्ति देनेवाला, विशेष अनुकम्पा करनेवाला, उद्धारक है। और सब नामों में श्रेष्ठ नाम यीशु का नाम है।

इव्हरेट फुलम, *प्रभु की प्रार्थना जीना* के संबंध में, पृष्ठ 34–40

२. *सारी सृष्टि में पहिलौठा* (कुलुस्सियों 1:15)। "ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार बाइबल के जगत में पहिलौठे पुत्र के लिये कुछ विशेष सुविधाएं तथा अधिकार होते थे, मसीह को भी सारी सृष्टि के संबंध में विशेष अधिकार – प्राथमिकता, प्रधानता तथा पूर्णप्रभुत्व हैं (वचन 16–18)।" द *एनआईव्ही स्टडि बाइबल,* पृष्ठ 1814

पाठ ४

परमेश्वर की भली एवं सिद्ध इच्छा

"तेरा राज्य आए; तेरी इच्छा पूरी हो"

सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र परमेश्वर के अपने धर्मी राज्य को पृथ्वी पर स्थापित करने के समग्र उद्देश्य की ओर संकेत करता है। बाइबल हमें बताती है कि यह राज्य, जहाँ परमेश्वर की इच्छा का पूर्णत: पालन किया जाता है, एक दिन इस संसार के राज्यों और राष्ट्रों का स्थान ले लेगा (दानिय्येल 7:27)। वह यह भी स्पष्ट करती है कि परमेश्वर ने लोगों को इस राज्य में लाने के अत्यधिक प्रयास किये हैं -- ऐसे लोग जो अपने जीवन पर की अपनी प्रभुता को त्याग देने के लिये और स्वयं को सम्पूर्ण हृदय से परमेश्वर द्वारा नियुक्त राजा, प्रभु यीशु मसीह, के अधिकार में कर देने के लिये तैयार हैं।

यीशु का प्रचार परमेश्वर के राज्य पर केंद्रित था। मत्ती 9:35 व्यक्त करता है, "और यीशु सब नगरों और गांवों में फिरता रहा और उनकी सभाओं में उपदेश करता, और राज्य का सुसमाचार प्रचार करता, और हर प्रकार की बीमारी और दुर्बलता को दूर करता रहा।" "मन फिराव क्योंकि स्वर्ग का राज्य निकट आया है," "स्वर्ग का राज्य . . . के समान है," और "पहिले तुम उसके राज्य और धर्म की खोज करो," ऐसे वाक्यांश उसकी शिक्षा में सामान्य थे।

अपने पुन:रुत्थान के बाद, यीशु ने इसी विषय को केन्द्र बनाये रखा। प्रेरितों के काम 1:3 में दर्ज है: "और उसने दु:ख उठाने के बाद बहुत से पक्के प्रमाणों से अपने आपको उन्हें जीवित दिखाया, और चालीस दिन तक वह उन्हें दिखाई देता रहा, और परमेश्वर के राज्य की बातें करता रहा।"

जब यीशु ने हमें प्रार्थना करने कहा, "तेरा राज्य आए; तेरी इच्छा पूरी हो," तो वह हमें निर्देश दे रहा था कि प्रार्थना का आरंभ हम परमेश्वर के उसी समग्र उद्देश्य पर ध्यान केंद्रित करते हुये करें जो उसके धर्मी राज्य को, न मात्र पृथ्वी पर एक दिन परन्तु हमारे हृदयों में आज, स्थापित करने का है।

परमेश्वर के अपने राज्य को स्थापित करने के उद्देश्य का प्रकट होना उत्पत्ति की पुस्तक में ही आरंभ होता है जब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार,

अपने साथ व्यक्तिगत संबंध रखने की क्षमता के साथ, उत्पन्न किया। परन्तु उत्पत्ति हमें प्रभु को उसके परमेश्वर होने के उचित स्थान से अपदस्थ करने के मनुष्य के निर्णय के बारे में बताती है। सर्प के प्रलोभन में गिरने के द्वारा, आदम और हव्वा ने परमेश्वर के भले और बुरे का निर्धारण करने के सर्वोच्च अधिकार को अनुचित रीति से हथिया लिया। इवरेट फुलम लिखते हैं:

> *परमेश्वर ने कहा कि एक निश्चित वृक्ष के फल को खाना गलत था। आदम और हव्वा ने कहा, 'नहीं, यह गलत नहीं है; यह सही है।' (देखिये: उत्पत्ति 2:16-17; 3:1-7) वे, और उनके उदाहरण का अनुसरण करते हुये हम सब, भले और बुरे, सही और गलत का निर्णय देनेवाले मापदण्ड़ बन गये। हम अपनी स्वतंत्रता का प्रयोग परमेश्वर की इच्छा एवं उद्देश्य के विरुद्ध करते हैं। हम एक प्रतिद्वंद्वी राज्य की स्थापना करते हैं जिसमें हम अधिपति होते हैं, औरों को हमारी इच्छाओं और उद्देश्यों की ओर झुकाने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार सारी पृथ्वी भर में ऐसे करोड़ों राज्य हैं जो परमेश्वर के राज्य के प्रतिद्वंद्वी हैं, ऐसे लोग जो स्वेच्छा से उसकी प्रभुसत्ता के अधीन नहीं जीयेंगे। और हमारे पास अस्तव्यस्तता है। इसलिये यीशु ने कहा कि हमें प्रार्थना करनी चाहिये, "तेरा राज्य आए . . . ।"*[1]

उत्पत्ति में दर्ज किये गये उस पतन के बाद, शेष पवित्रशास्त्र परमेश्वर द्वारा उठाये गये उन कदमों को प्रकट करता है जो उसने मनुष्य के उद्धार के लिये और उस प्रारम्भिक राज्य की पुनःस्थापना के लिये किये जिस में सदा जीने के लिये मनुष्य की रचना की गई थी। ऐसा उसने एक मनुष्य, अब्राहाम, को बुलाने के द्वारा किया कि वह उस राष्ट्र का मूलपिता हो जिसके द्वारा एक उद्धारकर्त्ता का आगमन होना था। रोमियों 5:12-21 स्पष्ट करता है कि जिस प्रकार एक मनुष्य, आदम, के द्वारा सब का परमेश्वर के राज्य से पतन हुआ, उसी प्रकार एक मनुष्य, यीशु, के द्वारा हम पुन: उसके राज्य में प्रवेश कर सकते हैं। रोमियों की पुस्तक हमें बताती है कि जब हम हमारे पापों के लिये हमारे बदले में हुई यीशु की मृत्यु में विश्वास करने का चुनाव करते हैं, हमें परमेश्वर के सामने यीशु की धार्मिकता का वरदान दिया जाता है। मात्र इतना ही नहीं, परन्तु परमेश्वर अपना आत्मा हम में रखता है कि हमें परमेश्वर की इच्छा को पूर्ण करने के लिये प्रोत्साहित करे और यह सम्भव करे कि परमेश्वर का सर्वोच्च अधिकार हमारे हृदयों में पुन: राज्य करे।

वे सब जो यह चुनाव करते हैं, परमेश्वर का पुनःस्थापित राज्य बनाते है और वे एक दिन पृथ्वी पर परमेश्वर के पुनःस्थापित राज्य का हिस्सा होंगे। प्रकाशितवाक्य के लेखक यूहन्ना ने जब लिखा, "देखो वह बादलों के साथ आनेवाला है और हर एक आंख उसे देखेगी . . ." (प्रकाशितवाक्य 1:5-7), उसने उस भविष्य की एक

झलक पायी जब यीशु मसीह अपने राज्य की स्थापना करने के लिये वापस आयेगा।

इसलिये "तेरा राज्य आए; तेरी इच्छा पूरी हो," यह प्रार्थना सच्चाई से करने का अर्थ सर्वप्रथम यह बात मान लेना है कि परमेश्वर उस राज्य का राजा है जिसे हम अभी नहीं देखते, परन्तु जिसमें हम प्रवेश करते है जब हम मसीह को अपने हृदय में राज्य करने देने का चुनाव करते हैं। यह प्रेमी स्वर्गीय पिता की भली एवं सिद्ध इच्छा का पालन करने का निश्चय करना है, चाहे जो भी व्यक्तिगत हानि हो।

दु:ख की बात है, हजारों लोग प्रतिदिन इस प्रार्थना को सच्चा अर्थ रखे बिना ही करते हैं। उस प्रत्येक जन के लिये जो इस प्रार्थना को बोलता है, यह प्रश्न होना चाहिये: क्या यीशु मसीह मुझ में राज्य करता है, इस प्रकार मुझे आज पृथ्वी पर उसके राज्य का हिस्सा बनाते हुये?

१. क) टीका में फुलम द्वारा मनुष्य के पतन के विषय में दिये गये दृष्टिकोण को फिर से देखिये। उसके वक्तव्य में आपको हमारे संसार तथा व्यक्तिगत जीवन में आनेवाली समस्याओं के विषय में कौन-सी बात स्पष्टता से दिखाई देती है?

ख) इसके प्रकाश में, हमारी प्रार्थनाओं को परमेश्वर की प्रभुसत्ता एवं इच्छा के प्रति समर्पण की मन:स्थिति के साथ आरंभ करना क्यों महत्वपूर्ण हैं?

२. क) पृथ्वी पर परमेश्वर के राज्य की, जिसमें यीशु मसीह प्रभु होगा, आप क्या कल्पना करते हैं कि वह कैसे होगा?

ख) ये वचन क्या सुझाव देते हैं?

भजन संहिता 45:6

दानिय्येल 7:27

३. यीशु ने बताया कि पृथ्वी पर परमेश्वर का राज्य का भविष्य में होगा, परन्तु उसने यह भी कहा, "परमेश्वर का राज्य तुम्हारे बीच में है" (लूका 17:21), उन लोगों के हृदयों एवं जीवनों में जो वर्तमान में परमेश्वर की इच्छा का चुनाव करते हैं। जब हम अपने विचारों, शब्दों, तथा कामों को परमेश्वर के राज्य को बनाने की ओर निर्देशित करने का चुनाव करते हैं तब पवित्र आत्मा हम में क्या उत्पन्न करता है?

मत्ती 18:1-4

मत्ती 22:37-39

गलातियों 5:22-23, 25

४. क) "तेरा राज्य आए" के साथ ही यीशु ने हमें "तेरी इच्छा पूरी हो" यह भी प्रार्थना करना सिखाया। रोमियों 12:2ख परमेश्वर की इच्छा का वर्णन कैसे करता है?

ख) कौन-सी बात हमें छोटे या बड़े निर्णयों में परमेश्वर की अगुवाई को परखने के योग्य बनाती है?

रोमियों 12:1-2क

नीतिवचन 3:5-6 (फिलिप्पियों 4:6)

गोल कोष्ठक ( ) में दिये गये हवाले वैकल्पिक हैं

भजन संहिता 119:105 (2 तीमुथियुस 3:16)

संदर्भः टिप्पणी 2, *परमेश्वर की इच्छा को परखना* पृष्ठ 36

५. क) यीशु ने किसकी प्रतिज्ञा की है कि वह परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने में हमारा मार्गदर्शन करेगा?

यूहन्ना 14:16–17; 16:13

संदर्भः टिप्पणी 3, *पवित्र आत्मा*, पृष्ठ 37

ख) 1 कुरिन्थियों 2:16ख (11–12) के अनुसार पवित्र आत्मा हमें क्या देता है?

६. बाइबल में, परमेश्वर की इच्छा दो बातों की ओर संकेत करती है: (1) नियम या उपदेश जो परमेश्वर ने हमारे जीने के लिये दिये हैं और (2) इतिहास में तथा हमारे प्रतिदिन के जीवन में परमेश्वर की इच्छा। हमारे जीवनों के लिये परमेश्वर द्वारा दिये उपदेशों के विषय में क्या सच है?

भजन संहिता 19:7–11

७. जब हम इन उपदेशों के अनुसार जीते हैं तो भजन संहिता 1:3 (1–2) के अनुसार उसका परिणाम क्या होता है?

८. पवित्रशास्त्र में परमेश्वर की इच्छा इतिहास एवं परिस्थितियों पर उसके प्रभुत्व के ओर भी संकेत करती है। जब जीवन का पथ कठिन, उलझानेवाला, हावी होनेवाला हो तो हम किस बात के विषय में निश्चित रह सकते हैं?

भजन संहिता 18:30

यशायाह 55:8-9

रोमियों 8:28

रोमियों 8:31-32

संदर्भ: टिप्पणी 4, *कठिन समयों में परमेश्वर पर भरोसा करना,* पृष्ठ 38

९. क) जो सच्चाई से प्रार्थना करता है: "तेरा राज्य आए; तेरी इच्छा पूरी हो," उसके लिये परमेश्वर का वचन क्या प्रतिज्ञा देता है?

भजन संहिता 23:6

भजन संहिता 32:8

सा रां श

१०. बहुत-से लोग सोचते हैं कि यदि वे मसीह को अपने जीवन का प्रभु बनने देते हैं तो वह उनके जीवन को दयनीय बना देगा। स्वयं को उसके अधीन करने से मिलनेवाले प्रतिफलों के विषय में आपने इस पाठ में क्या देखा?

११. क) क्या आपके जीवन के कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जो इस समय उलझन में डालनेवाले या कठिन हैं?

ख) इस (इन) क्षेत्रों के विषय में परमेश्वर की आपके लिये क्या इच्छा है?

ग) उसकी प्रतिज्ञा क्या है?

१२. "तेरा राज्य आए," यह प्रार्थना सच्चाई से करने का अर्थ क्या है?

"तेरी इच्छा पूरी हो"?

१३. प्रार्थना का आरंभ इस मन:स्थिति से करना क्यों महत्वपूर्ण है?

पाठ ४ टिप्पणियाँ

१. इव्हरेट एल. फुलम, लिविंग द लॉ:डस् प्रेयर, पृष्ठ 50

२. *परमेश्वर की इच्छा को परखना,*

इव्हरेट फुलम लिखते हैं: "किसी बात के विषय में परमेश्वर की इच्छा को परखने के लिये, मैं कहता हूँ, 'प्रभु, मैं इसे करना नहीं चाहूँगा जब तक तू नहीं चाहता कि मैं इसे करूँ। यदि तू चाहता है कि मैं इसे करूँ तो मेरे हृदय को इसके लिये प्रेरित कर; यदि तू नहीं चाहता कि मैं इसे करूँ तो मेरा हृदय इससे दूर कर।' तब मैं अपनी पत्नी से, मित्रों से, भरोसेमंद परामर्शदाताओं से बात करता हूँ। और, बहुत ही महत्वपूर्ण रीति से, मैं उस बुद्धि का उपयोग करता हूँ जो परमेश्वर ने मुझे दी है। मैं विकल्पों को तौलता हूँ। और थोड़ा-थोड़ा करके बातें घटित होने लगती हैं। मैं इस या उस दिशा में जाने संबंधी अपने भीतर एक ऐसी ठोस, तर्कपूर्ण इच्छा बढ़ते हुये पाता हूँ जिस पर मैं भरोसा कर सकता हूँ।" लिविंग द लॉ:डस् प्रेयर, पृष्ठ 65

फिलिप केलर, परमेश्वर की इच्छा को परखने के लिये सात सामान्य नियम देते हैं:

१. क्या यह निश्चित रीति से परमेश्वर की उस इच्छा से सहमत है जो उसके वचन में प्रकट की गई और लिखी गई है? यदि हां, बहुत अच्छा। यदि नहीं, उसे मत कीजिये।

२. क्या आपने ऐसी ही परिस्थिति का सामना पहले भी किया है? यदि हां तो तब

परमेश्वर ने आपको अपनी इच्छा के रूप में क्या दर्शाया था? यदि आपने गलती की थी तो उसे मत दोहराइये।

३. यदि निर्णय कठिन है और आपके बस के बाहर है, तो परिपक्व एवं ईश्वरीय जनों से, जो परमेश्वर की इच्छा को पहचानना जानते हैं, बुद्धिपूर्ण तथा प्रार्थनापूर्ण सलाह की खोज कीजिये।

४. उसे शान्त परन्तु गंभीर प्रार्थना का मामला बनाइये। परमेश्वर से मांगिये, अपने पिता से, उसके आत्मा के द्वारा, कि वह आप में गहरी भीतरी दृढ़ धारणा उत्पन्न करते हुये, निश्चित रूप से स्पष्ट करे कि उचित कार्यदिशा क्या है।

५. हमारे पिता ने हमें तर्कसंगत (हितकर) तथा व्यावहारिक ज्ञान के भंडार का दान दिया है जिसका हम उपयोग करें ऐसी अपेक्षा वह हम से करता है। हम उसकी उपेक्षा करके जोखिम उठाते हैं।

६. आशा और प्रतीक्षा कीजिये कि इस हालत को घेरी हुई घटनाएं तथा परिस्थितियां इस तरह से बदलती हुई दिखाई दें कि वे आपके मन और इच्छा को परमेश्वर की इच्छा निश्चित करने हेतु प्रभावित करें। समय स्वयं बहुतेरे निर्णयों की चिंता कर लेता है। हम बहुत-ही अधीर एवं जल्दबाज होने की संभावना रखते हैं। परमेश्वर कभी-कभी ही भारी हड़बड़ी में रहता है।

७. आशा कीजिये कि जैसे-जैसे समय बितता जाता है, आपके लिये किसी विशिष्ट कार्यदिशा में बढ़ने हेतु या तो द्वार खुलेगा या द्वार बंद हो जायेगा। इसके साथ ही आप में स्वीकृति का भाव, आप पर परमेश्वर की इच्छा प्रकट की जा रही है इसका आनंद, उसे पूरा करने में खुशी और उसके विषय में शांति होनी चाहिये।

अ लेमैन लुक्स एट द लॉर्ड्स प्रेयर, पृष्ठ 83-84

स्वर्गीय डा. बिल ब्राइट ने वह सिखाया जिसे उन्होंने "संयम का सिद्धान्त" कहा। एक रेखा से विभाजित किये गये कागज पर, 2 तीमुथियुस 1:7 लिखिये: "परमेश्वर ने हमें भय की नहीं परन्तु सामर्थ्य और प्रेम और संयम की आत्मा दी है।" तब, जब कि आप रेखा की एक ओर अपने सामने की कार्यदिशाओं के लाभ और दूसरी ओर हानि की सूची बनाते हैं, खुले मन से और परमेश्वर के सामने यथा-संभव इमानदार और निष्पक्ष होते हुये, उससे अचूक मार्गदर्शन की मांग कीजिये। बहुत बार, परिणाम ज़बरदस्त रीति से या तो निर्णय के पक्ष में या विपक्ष में होता है।

३. *पवित्र आत्मा* । परमेश्वर ने स्वयं को बाइबल में त्रिएक परमेश्वर के रूप में घोषित किया है; तीन ईश्वरीय व्यक्ति (पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा), सब में

ईश्वरत्व का समान सार है। पवित्र आत्मा, जो त्रिएक परमेश्वर का तीसरा व्यक्ति जाना जाता है, उस हर एक मनुष्य में वास करता है जो मसीह को व्यक्तिगत रीति से ग्रहण करता है (यूहन्ना 1:12; 14:16-17; रोमियों 8:9)। पवित्रशास्त्र पवित्र आत्मा को पुरुषवाचक सर्वनाम से, एक पृथक व्यक्तित्व के रूप में प्रकट करता है। यूहन्ना 3 में, यीशु नीकुदेमुस से बताता है कि पवित्र आत्मा एक विश्वासी में पुनरुज्जीवन का या आत्मिक जन्म का कार्य करता है। जब कि पवित्र आत्मा को देखा नहीं जा सकता, हम उसके काम के प्रमाण को देख सकते हैं (3:8)। जब हम परमेश्वर से मांगते हैं (लूका 11:13) कि हमें पवित्र आत्मा से "भर दे" (इफिसियों 5:18 ख), वह उत्तर में हमें ईश्वरीय ढंग से निर्देश तथा मसीही जीवन जीने के लिये सामर्थ्य प्रदान करता है (गलातियों 5:22-23; इफिसियों 3:16-20; यहेज्केल 36:26-27)। बाइबल कभी-कभी इसका वर्णन "मसीह तुम में" कह कर करती है (कुलुस्सियों 1:27 ख)। टिप्पणी 4, *पवित्र आत्मा के काम,* भी देख लीजिये, पृष्ठ 67

४. *कठिन समयों में परमेश्वर पर भरोसा करना ।* सी. एच. वेल्च ने लिखा: "प्रभु ने, संभवत:, यह मेरे साथ हो ऐसी निश्चित योजना न बनायी हो, परन्तु उसने इसकी अनुमति बहुत ही निश्चित रूप से दी है। इस कारण, यद्यपि यह शत्रु का किया हमला हुआ होता, जब तक यह मुझ तक पहुंचे, इसे प्रभु की अनुमति प्राप्त हो गई है और इसलिये सब कुछ भला है। प्रभु इसे जीवन के सारे अनुभवों के साथ मिलाकर उससे भलाई ही को उत्पन्न करेगा।"

रूत मेयर्स, अपने *31 डेज़ आफ प्रेज़,* में कहती है: "स्तुति आपके इस ज्ञान को अत्यधिक बढ़ा सकती है कि कष्टदायक परिस्थितियां आवरण में छिपी परमेश्वर की आशीषें होती हैं। स्तुति के द्वारा आप अपने ध्यान को परमेश्वर पर केंद्रित करते हैं . . . आप अपनी समस्याओं की ओर नये दृष्टिकोण से देखना आरंभ करते हैं -- आप उनकी तुलना अपने शक्तिमान, असीमित परमेश्वर से करते हैं। आप उन्हें पर्वतों के रूप में नहीं परन्तु मिट्टी के टीले के रूप में, रुकावटों के नहीं परन्तु सुअवसरों के रूप में, ठोकर लगने के पत्थरों के बजाय उन्नति की सीढ़ी के रूप में . . . नयी सफलताओं के आरंभ, परमेश्वर के आश्चर्यकर्मों के लिये कच्चे माल के रूप में देखते हैं।" *31 डेज़ आफ प्रेज़,* पृष्ठ 126-127

भाग २:

अपनी आवश्यकताओं और समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करना

पाठ ५

मांगो, ढूंढ़ो, खटखटाओ

"हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।"

मसीहियों के लिये परमेश्वर के इस खुले निमंत्रण से बढ़कर अद्‌भुत बात और कोई नहीं है जो हमें अपने हृदय के सारे बोझ को लेकर परमेश्वर के पास आने के लिये उसने दिया है। अब तक, यीशु ने हमें अपनी प्रार्थना का आरंभ परमेश्वर को उसके श्रेष्ठ स्थान में देखते हुये तथा उसके निकट अपने ऐसे प्रेमी पिता के रूप में आते हुये करना सिखाया जिसकी इच्छा एवं राज्य को हम सर्वोपरि चाहते हैं। यह हमें ऐसी उचित मन:स्थिति में ले आता है कि हम उसके सम्मुख अपनी आवश्यकताओं और चिंताओं की चर्चा खुली रीति से करें और अपने निवेदन प्रस्तुत करें। यीशु हमें सिखाता है कि परमेश्वर इसका स्वागत करता है और सुनने, आवश्यकताओं की पूर्ति करने, अगुवाई करने तथा रक्षा करने के लिये सर्वदा उपलब्ध रहता है। प्रभु की प्रार्थना के दूसरे भाग में, यीशु हमारे परमेश्वर के साथ के संबंध के इसी पहलू पर ध्यान केंद्रित करता है।

यीशु इस भाग का आरंभ एक याचना से करता है: "हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।" "रोटी" शब्द निश्चय ही शारीरिक आहार की ओर संकेत करता है, परन्तु साथ ही हमारी सारी मूलभूत – शारीरिक, भावनात्मक तथा आत्मिक – आवश्यकताओं की ओर भी संकेत करता है। परमेश्वर चाहता है कि हम उस पर हमारे ऐसे एकमात्र स्रोत के रूप में निर्भर रहें जो हमें उस "बहुतायत" के जीवन को संभालने के लिये सब कुछ देता है जिसे देने के लिये यीशु आया (यूहन्ना 10:10 ख)। यद्यपि हो सकता है कि वह हमारी सहायता करने के लिये किसी मित्र का, हमें स्वस्थ करने के लिये डाक्टर का, या हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये नौकरी का उपयोग

करे, परन्तु "हर एक अच्छा वरदान और हर एक उत्तम दान" अंततः परमेश्वर ही की ओर से आता है (याकूब 1:17)। जब हम बालक जैसे विश्वास के साथ उसके पास आते हैं, वह हमें एक दिन के लिये जिस "रोटी" की आवश्यकता है उसे देने की व्यवस्था करते हुये जीवन की हर एक चुनौती से पार ले जाने की प्रतिज्ञा करता है।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि परमेश्वर पर ऐसी निर्भरता से एवं अपनी आवश्यकताओं के लिये खुली रीति से बातचीत से हमारी अपने सृष्टिकर्ता के साथ की सहभागिता की गहरी आत्मिक आवश्यकता पूरी होती है। पांचवी शताब्दी के धर्मशास्त्रज्ञ, ऑगस्टिन, ने लिखा: "हे परमेश्वर, आपने हमें अपने लिये बनाया है, और हमारे ह्रदय तब तक बेचैन रहते हैं जब तक कि वे आपमें अपना चैन न पा लें।" जब हम, परमेश्वर की योजना के अनुसार, हर एक बात के लिये परमेश्वर से बात करना सीखते हैं, हम उसके साथ के अपने संबंध में चैन पायेंगे।

यीशु ने कहा, "जीवन की रोटी मैं हूँ, जो मेरे पास आता है वह कभी भूखा न होगा, और जो मुझ पर विश्वास करता है वह कभी प्यासा न होगा" (यूहन्ना 6:35)। यीशु ने क्रूस पर अपनी मृत्यु के द्वारा हमारे लिये मार्ग तैयार किया कि हमारा परमेश्वर से मेल हो और प्रेमी स्वर्गीय पिता के रूप में हम उसके निकट हो जायें। जब हम प्रार्थना और उसके वचन के मनन के लिये प्रतिदिन प्रभु से मिलते हैं, हमारी आत्माएँ तृप्त होती हैं, हमारी आत्मिक प्यास बुझती है, और हमारा आत्मिक जीवन संभलता है। मात्र इतना ही नहीं, उसका पवित्र आत्मा, जो हम में बसा हुआ है, हमारे मसीह के साथ के समय का उपयोग हमें उसके स्वरूप में परिवर्तित करने के लिये करता है और हमें औरों तक परमेश्वर के प्रेम तथा अनुग्रह के साथ जाने के लिये बल देता है।

पौलुस ने लिखा है: "मेरा परमेश्वर भी अपने उस धन के अनुसार जो महिमा सहित मसीह यीशु में है, तुम्हारी हर एक घटी को पूरी करेगा" (फिलिप्पियों 4:19)। यीशु ने कहा, "माँगो, तो तुम्हें दिया जायेगा; ढूँढ़ो, तो तुम पाआगे; खटखटाओ, तो तुम्हारे लिये खोला जाएगा" (मत्ती 7:7)। "हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे" यह प्रार्थना करना परमेश्वर से अपनी सारी - शारीरिक, भावनात्मक तथा आत्मिक - आवश्यकताओं की पूर्ति की माँग करना है; यह जानते हुये कि आज और आनेवाले हर रोज ऐसा ही करने के लिये वह है।

१. क) लोग अपनी आवश्यकताओं के साथ क्या करने की ओर प्रवृत्त होते हैं यदि वे उन्हें प्रभु के पास नहीं ले जाते?

ख) मत्ती 6:25-32 हमें अपनी आवश्यकताओं के साथ क्या *नहीं* करने कहता है और क्यों?

ग) इसके बज़ाय हमें क्या करने की शिक्षा दी गई है?

मत्ती 6:33

फिलिप्पियों 4:6-7

२. क) परमेश्वर किस सीमा तक हमारी चिंता करता है इसका वर्णन ये वचन कैसे करते हैं?

भजन संहिता 121:3, 7-8

लूका 12:7क

ख) वह हम से क्या चाहता है कि हम अपनी आवश्यकताओं और चिंताओं के साथ करें?

भजन संहिता 62:8

लूका 18:1 (1 थिस्सलुनीकियों 5:17)

गोल कोष्ठक ( ) में दिये गये वचन वैकल्पिक हैं

इब्रानियों 4:16

३. क) ये लेखांश हमें किस बात का स्मरण दिलाते हैं, जब हम अपनी आवश्यकताओं के साथ परमेश्वर के पास आते हैं?

प्रेरितों के काम 17:28क

2 कुरिन्थियों 3:5

याकूब 1:17 (यूहन्ना 3:27)

ख) मूसा ने इस्राएलियों को कौन-सी चेतावनी दी थी जिसका ध्यान रखना हमारे लिये महत्वपूर्ण है?

व्यवस्थाविवरण 8:10-14, 17-18 क

४. परमेश्वर ने जंगल में 40 वर्षों तक, लाखों इस्राएलियों के लिये आश्चर्यजनक रीति से भोजन उपलब्ध कराया।

पढ़िये: निर्गमन 16:14-27, 31, 35

क) मन्ना प्राय: कब मिलता था?

ख) वे उसे कब जमा करते थे?

ग) वह कब तक रहा?

घ) उनकी आवश्यकता की पूर्ति करने के परमेश्वर के इस ढंग से उन्होंने क्या सीखा?

५. क) यीशु ने यूहन्ना 6:32-35 में स्वयं का वर्णन कैसे किया है?

ख) यूहन्ना 4:47-51 में यीशु ने भी क्या प्रतिज्ञा की है?

संदर्भः टिप्पणी 2, *मसीह को क्यों मेरे बदले में अपना प्राण देना पड़ा?* पृष्ठ 12

६. क) यीशु हमें, जब हम उसके उद्धार में विश्वास करते हैं, न मात्र आत्मिक जीवन देता है परन्तु वह यह भी चाहता है कि जब हम प्रार्थना और उसके वचन पर मनन करने के लिये प्रतिदिन उसके साथ समय बिताते हैं तब वह निरंतर हमारा आत्मिक पोषण करे। यह "रोज की रोटी" किस प्रकार उस मन्ना के समान है जिसे इस्राएलियों ने जंगल में खाया? (प्रश्न 4 क - घ का पुनर्विलोकन कीजिये) आप क्या समानताएं देखते हैं?

ख) यीशु से निरंतर संबंध बनाये रखने की हमारी आवश्यकता के विषय में यीशु ने क्या कहा?

यूहन्ना 15:5

ग) प्रभु के साथ रहने के द्वारा हम कैसे बदलते जाते हैं?

2 कुरिन्थियों 3:18

७. क) मत्ती 7:7-8 वचन किस प्रकार हमारे लिये परमेश्वर की इस इच्छा को प्रकट करते हैं कि हम अपनी प्रत्येक आवश्यकता, चिंता और प्रश्न को लेकर उसके पास आयें?

८. उसकी प्रतिज्ञा क्या है?

फिलिप्पियों 4:19

सा रां श

९. क) आज आपके जीवन में कौन-सी शारीरिक, भावनात्मक या आत्मिक आवश्यकताएं हैं? दूसरों के विषय में क्या चिंताएं हैं?

ख) इन आवश्यकताओं तथा चिंताओं का सामना करते समय, यीशु आपको क्या *नहीं करने के* लिये कहता है?

ग) क्या करने लिये आपको प्रोत्साहित किया गया है?

१०. क) हम यीशु का अनुभव "जीवन की रोटी" के रूप में कैसे कर सकते हैं?

ख) प्रतिदिन उसके साथ समय बिताना आपके जीवन में क्यों महत्वपूर्ण है?

ग) क्या आपके पास प्रार्थना करने तथा उसके वचन पर मनन करने के लिये प्रभु के साथ नियमित मिलने का एक निश्चित स्थान, समय और योजना है? यदि नहीं तो कदाचित आप अभी इसकी व्यवस्था करना चाहेंगे। परमेश्वर के साथ उन रुकावटों की चर्चा कीजिये जो आपके सामने आती रही हैं और इस समय को एक प्राथमिकता बनाने हेतु आपको जिस सहायता की आवश्यकता है उसे व्यक्त कीजिये।

११. "हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे" ऐसी प्रार्थना करने का अर्थ क्या है इसका संक्षिप्त विवरण आप कैसे करेंगे?

जब कभी कोई अपने पापों को उघाड़ने तैयार होता है, परमेश्वर सर्वदा उन्हें ढाँपने के लिये तैयार रहता है।

पाठ ६

क्षमा की स्वतंत्रता

". . . हमारे अपराधों को क्षमा कर।"

प्रभु की प्रार्थना के इस दूसरे भाग में पांच वाक्यांश हमारी आवश्यकताओं तथा समस्याओं से संबंध रखते हैं, उनमें से दो क्षमाशीलता से संबंधित हैं। यह विषय इतना महत्वपूर्ण है कि यीशु ने उस पर पुनः जोर देने तथा उसे गहराई से विकसित करने के लिये बाद में और समय लिया। उसने ऐसा कदाचित इसलिये किया क्योंकि दोष-भावना (इस पर इस पाठ में विचार किया जायेगा) तथा अक्षमाशीलता (जिस पर हम पाठ 7 में विचार करेंगे) से जुड़ी भावनाएं विनाशकारी हो सकती हैं।

यह दुःख की बात है कि बहुत से ऐसे लोग जो वास्तव में परमेश्वर की क्षमा का अनुभव नहीं करते वे "हमारे अपराधों को क्षमा कर" इस वाक्यांश को प्रार्थना में कहते हैं। कुछ लोगों को तो परमेश्वर के कर्जदार होने का कोई भाव ही नहीं होता। यीशु के समय के फरीसियों के समान वे स्वयं की तुलना अन्य "जघन्य पापियों" से करते हैं और स्वयं के विषय में काफी अच्छा महसूस करते हैं। तथापि, यीशु ने उससे भी अधिक उच्चतर मानक निर्धारित किया है। उसने परमेश्वर तथा उसके वचन को आदर्श ठहराते हुये कहा, "सिद्ध बनो जैसा तुम्हारा स्वर्गीय पिता सिद्ध है" (मत्ती 5:48)।

कुछ अन्य लोग दोष-भावना के साथ जीते हैं, पाप को पाप कहने से इन्कार करते हुये पाप को ढांपने के प्रयास करते हैं या किसी प्रकार से परमेश्वर की क्षमा कमाने का प्रयास करते हैं। बहुतेरे झूठी दोष-भावना के साथ जीते हैं।[2]

परन्तु परमेश्वर हमें दोष-भावना तथा लज्जा को घेरकर क्षीण कर देनेवाली भावनाओं से मुक्त कराना चाहता है, और इसे संभव करने के लिये उसने बहुत बड़ा दाम चुकाया है। मसीह के क्रूस के द्वारा, जहां यीशु ने हमारे पापों के दण्ड को सह लिया, हम उस दोष-भावना से मुक्त हो सकते हैं जो हमारी शक्ति को क्षीण करती है और हमें एक प्रेमी पिता से अलग करती है। यीशु यह भी सिखा रहा था कि अवश्य है कि हम अपने जीवन में जो पाप है उसे अपने पिता से न छिपायें ताकि हम उसके साथ एक संतुष्ट करनेवाले व्यक्तिगत संबंध में चल सकें।

अत:, "हमारे अपराधों को क्षमा कर," यह वाक्यांश हमें स्मरण दिलाता है कि पवित्र आत्मा से यह मांगे कि वह उस प्रत्येक गलत बात का हमें स्मरण दिलाये जिसे कबूल करना और त्याग देना हमारे लिये आवश्यक है। यदि वह हमें किसी विशेष बात की याद दिलाता है जो हम ने की है, हम तुरन्त परमेश्वर के साथ अपने पाप के विषय में सहमत हो सकते हैं, बदलने का निश्चय कर सकते है और उसका धन्यवाद दे सकते हैं कि मसीह ने क्रूस पर अपने प्राण दिये इस कारण हमें क्षमा किया गया है।

यदि आत्मा किसी बात की ओर संकेत नहीं करता तो ये शब्द, "हमारे अपराधों को क्षमा कर," हमें स्मरण दिला सकते हैं कि हम इस बात के लिये कृतज्ञ बने रहें कि हम मसीह के क्रूस के द्वारा प्राप्त क्षमा के कारण पवित्र परमेश्वर की उपस्थिति में आ सकते हैं। इस अर्थ में, हम परमेश्वर के प्रति, उसके अद्‌भुत अनुग्रह के लिये सर्वदा कर्जदार और कृतज्ञ रहेंगे। एक लेखक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

क्योंकि निष्पाप उद्धारकर्त्ता ने दिया प्राण अपना
अपराध-मुक्त मानी गयी मेरी दोषी आत्मा,
क्योंकि परमेश्वर जो धर्मी है सन्तुष्ट हुआ,
कि उसकी ओर देखे और करे मुझे क्षमा ।

इस पाठ में, हम पापक्षमा की स्वतंत्रता के विषय में देखेंगे जिसका अनुभव परमेश्वर चाहता है हम करें, जब हम "हमारे अपराधों को क्षमा कर" यह प्रार्थना करते हैं।

१. दोष-भावना के परिणाम-स्वरूप लोग किन समस्याओं का अनुभव करते हैं?

२. क) दोष-भावना और परमेश्वर से दूरी की भावना से निपटने का प्रयास लोग किन तरीकों से करते हैं?

ख) दोष-भावना के प्रति की गईं ये प्रतिक्रियाएं क्यों मात्र और अधिक समस्याएं ही उत्पन्न करती हैं?

३. आपके विचार से दोषी व्यक्ति की वास्तविक आवश्यकताएं क्या होती हैं?

४. क) यशायाह 59:2 के अनुसार कौन-सी बातें मनुष्य को पवित्र परमेश्वर से

अलग करती हैं?

ख) रोमियों 6:23क के अनुसार पाप का दण्ड़ क्या है (तुलना करें: उत्पत्ति 2:16-17)?

टिप्पणी: *मृत्यु* का बाइबलीय अर्थ, इस हालत में, परमेश्वर से अलग होना है।

५. क) यीशु मसीह के निष्पाप जीवन एवं बलिदानात्मक मृत्यु के 700 वर्ष पहले यशायाह ने किस प्रकार परमेश्वर के उद्धार के वरदान का वर्णन किया था?

यशायाह 53:5-6

यशायाह 53:10-12

ख) इसे पतरस ने यीशु के पुन:रुत्थान के पश्चात किस प्रकार व्यक्त किया?

1 पतरस 2:24

६. क) नीचे दिये गये वचनों के अनुसार परमेश्वर के साथ हमारा संबंध कैसे ठीक होता है?

रोमियों 3:22

रोमियों 3:24-25क

संदर्भ: टिप्पणी 1, *उद्धार, मेल,* पृष्ठ 51
इफिसियों 2:8-9

ख) मसीह में परमेश्वर की क्षमा के वरदान को स्वीकार करने का परिणाम क्या है?

रोमियों 5:1

७. मसीह में उद्धार के परमेश्वर के वरदान को स्वीकार करना यह जीवन में एक बार सर्वदा के लिये किया जानेवाला ऐसा निर्णय है जो हमें अनंतकाल के लिये परमेश्वर के परिवार में स्थान दिलाता है (1 यूहन्ना 5:1क, 11-12)। परन्तु मसीह के अनुयायी होने के नाते, हम पापों से शुद्धता, क्षमा, और नया आरंभ निरंतर प्राप्त करते रह सकते हैं।

क) परमेश्वर के प्रेम तथा क्षमा का अनुभव करने के लिये अवश्य है कि हम अपने *पापों को मान लें*, इसका अर्थ परमेश्वर से सहमत होना है कि कोई विशिष्ट कार्य गलत था। जब हम परमेश्वर के सम्मुख अपने पाप मान लेते हैं तो उसकी प्रतिज्ञा क्या है?

1 यूहन्ना 1:9?

ख) परमेश्वर के प्रेम तथा क्षमा का अनुभव करने के लिये *पश्चात्ताप* करना अर्थात् ईश्वरीय जीवन जीने के लिये गलत बात से पूर्णतः मन फिराना आवश्यक है। दाऊद ने भजन संहिता 51:10-12 में पश्चात्तापी हृदय का प्रदर्शन किस प्रकार किया है?

८. क) नीचे दिये गये वचन परमेश्वर के गुणों के विषय में कौन-सी बातें प्रकट करते हैं जो हमें पश्चात्तापी हृदय के साथ उस के पास आने के लिये प्रोत्साहित करती हैं?

भजन संहिता 103:8-14

मीका 7:18-19

ख) जो परमेश्वर के पास सच्चे पश्चात्ताप के साथ आता है उसके लिये परमेश्वर की प्रतिज्ञा क्या है?

यशायाह 43:25

यशायाह 55:7

९. किस के आधार पर हम *किसी भी*, छोटे या बड़े, पाप से शुद्ध किये जाते हैं? इफिसियों 1:7 (कुलुस्सियों 1:20–22)

गोल कोष्ठक () में दिये गये वचन वैकल्पिक हैं

मत्ती 26:28 (यीशु कहता है)

१०. "हमारे अपराधों को क्षमा कर" यह प्रार्थना हमें आत्म-परीक्षण और लज्जा में डालने के लिये नहीं है। कुछ लोग झूठी दोष-भावना से लड़ते हैं। झूठी दोष-भावना किस प्रकार सच्ची दोष-भावना से भिन्न है? (देखिये: टिप्पणी 2, *झूठी दोष-भावना*, पृष्ठ 52)।

११. भजन संहिता 130:3-4, 7-8 में प्रभु की क्षमा तथा उद्धार के विषय में क्या घोषित किया गया है जो बाद में मसीह की बलिदानात्मक मृत्यु में पूरा हुआ?

टिप्पणी: *प्रभु का भय* (भजन संहिता 130:4) प्रभु में श्रद्धापूर्ण भरोसा होता है।

सा रां श

१२. परमेश्वर किस आधार पर हमारे ऋण क्षमा करता है और हमें दोष-भावना से छुटकारा देता है?

१३. पवित्र परमेश्वर द्वारा क्षमा किये जाने हेतु क्यों आपके लिये मसीह का क्रूस आवश्यक था? आपके लिये परमेश्वर के प्रेम के विषय में क्रूस क्या प्रमाणित करता है?*

१४. जब हमने मसीह को स्वीकार किया है, प्रतिदिन गलत कामों के लिये परमेश्वर की क्षमा प्राप्त करने के लिये हमें क्या करना चाहिये (प्रश्न 7)? हृदय की कौन-सी

मनोवृत्तियां महत्वपूर्ण है?**

१५. "हमारे अपराधों को क्षमा कर" यह प्रार्थना आपको क्या करने की याद दिलाती है?

----

* यदि आपने मसीह यीशु में परमेश्वर की क्षमा स्वीकार करने का निर्णय कभी नहीं लिया है और अभी लेना चाहते हैं तो इसके लिये प्रस्तावित प्रार्थना नीचे दी गई है।

प्रभु यीशु, मैं यह स्वीकार करता हूं कि मेरे पापों ने मुझे तुझ से अलग कर दिया है। मैं विश्वास करता हूं कि जब तू ने क्रूस पर अपना प्राण दिया तब मेरे सारे पापों का दण्ड तू ने चुका दिया। मैं अब उस पूर्ण क्षमा को ग्रहण करता हूं जो तू देता है। अब मैं तुझे मेरे जीवन में आने का और मुझे वैसा इन्सान बनाने का निमंत्रण देता हूं जिसके लिये तू ने मेरी सृष्टि की है। आमीन।।

यदि आपने यह प्रार्थना की है तो मसीह इब्रानियों 13:5ख तथा प्रकाशितवाक्य 3:20 में आपसे क्या प्रतिज्ञा करता है?

** *क्या आपके जीवन में कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहां आप सर्वदा के लिये परमेश्वर की क्षमा का अनुभव करना चाहेंगे?* यह लाभदायक होगा कि एक कागज लेकर प्रभु के सामने जायें, और प्रार्थनापूर्वक उन सारे पापों की सूची बनायें जो क्षमा नहीं किये गये हैं। समय लेकर "उसे पाप कबूल कीजिये, वह क्रूस के आधार पर क्षमा हो गया है यह स्वीकार कीजिये, और परमेश्वर से विनती कीजिये कि आपको बदल दे।" तब उस कागज पर बड़े-बड़े अक्षरों मे 1 यूहन्ना 1:9 लिखिये और परमेश्वर की सम्पूर्ण क्षमा के प्रतीक के रूप में उसे फाड़ दीजिये।

स्वयं पर क्षमा को व्यक्त कीजिये, तब उन विशेष व्यक्तियों की क्षमा को स्वीकार कीजिये जिन्होंने आपको चोट पहुंचाई हो। अंततः, आपको महसूस होगा कि आपको अगुवाई मिल रही है कि जिनके प्रति आपने गलत किया है उनसे क्षमा मांगे। ये काम कितने भी कठिन क्यों न लगे, उनका परिणाम बड़ा आनंद और स्वतंत्रता है।

पाठ ६ टिप्पणियां

१. क) उद्धार बाइबल का वह शब्द है जिसका अर्थ "खरीद लेना" या "दाम

(मुक्तिमूल्य) चुकाकर स्वतंत्र करना" है और यह एक गुलाम को दाम चुकाकर गुलामी से बाहर निकालने की ओर संकेत करता है। रोमियों 3:24 कहता है "उसके अनुग्रह से उस छुटकारे के द्वारा जो मसीह यीशु में है, सेंत मेंत धर्मी ठहराये जाते हैं।" कहा जाये तो, जन्मजात पापी होने के कारण, हम पाप की गुलामी के बाजार में है। परन्तु मसीह ने, जो एकमात्र निर्दोष मनुष्य था (क्योंकि उसमें पाप नहीं था), पापियों को पाप की गुलामी के बाजार से छुड़ाने के लिये अपने रक्त के द्वारा छुटकारे का दाम चुकाया और उन्हें परमेश्वर की संतान होने के लिये स्वतंत्र कर दिया। केवल मृत्यु के दाम के द्वारा ही कोई स्वतंत्र किया जा सकता है (रोमियों 6:23), तथा केवल वही जो स्वतंत्र है (निष्पाप, जैसा कि मसीह था; तुलना कीजिये: इब्रानियों 4:15; 2 कुरिन्थियों 5:21) गुलाम की स्वतंत्रता को खरीद सकता है। अपने क्रूस पर बहाये गये रक्त के दाम के द्वारा, यीशु ने उस मनुष्य को पाप की गुलामी के बाजार से खरीद लिया है जो उसमें विश्वास रखता है और उसे परमेश्वर की संतान होने के लिये स्वतंत्र करता है (गलातियों 3:13; 1 तीमुथियुस 2:5-6; 1 पतरस 1:18-19; गलातियों 4:4-5)।

ख) मेल का अर्थ "किसी व्यक्ति को शत्रुता से मित्रता की दशा में परिवर्तित करना" है। बाइबल बताती है कि मनुष्य परमेश्वर से शत्रुता की दशा में ही जन्मा है। मनुष्य के भीतर की दोष-भावना के कारण पाप मनुष्य तथा परमेश्वर के बीच में एक अवरोध खड़ा कर देता है। यह दोष-भावना उसे परमेश्वर के विरोध में कर देती है। मेल यीशु की क्रूस पर हुई मृत्यु का वह पहलू है जिसने मनुष्य के पाप तथा उसके परिणामों के अवरोध को हटा दिया और इस प्रकार दोष-भावना को दूर कर दिया जो परमेश्वर के विरुद्ध बैर का कारण था। मसीह की क्रूस पर हुई मृत्यु ने पवित्र परमेश्वर और पापी मनुष्य के बीच के प्रत्येक अवरोध को दूर कर दिया। मेल सब मनुष्यों के लिये उपलब्ध है, चाहे कोई कितना भी पापी क्यों न हो। जब कि मेल सब के लिये उपलब्ध एवं पर्याप्त है, उसे मात्र वे ही पाते हैं जो इस मेल के वरदान को विश्वास के द्वारा व्यक्तिगत रीति से स्वीकार करते हैं। "इसलिये जब हम विश्वास से धर्मी ठहरे, तो अपने प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर के साथ मेल रखें" (रोमियों 5:1)। "बैरी होने की दशा में तो उसके पुत्र की मृत्यु के द्वारा हमारा मेल परमेश्वर के साथ हुआ" (रोमियों 5:10)। पृष्ठ 12 पर दी गई टिप्पणी 2 भी देखिये: *मसीह को क्यों मेरे बदले में अपना प्राण देना पड़ा?*

2. *झूठी दोष-भावना* । *वॉलफ्रीड जॉन्सन अपनी पुस्तक फॉलिंग अपार्ट ऑर कमिंग टुगेदर* में सच्ची एवं झूठी दोष-भावना के मध्य निम्नलिखित भेद बतलाती है।*

	सच्ची दोष-भावना	झूठी दोष-भावना
दोष-भावना उत्पन्न करनेवाला	**पवित्र आत्मा** - भूल-चूक की ओर ध्यान आकर्षित करता है, सत्य पर आधारित	**शैतान** दोषी ठहराता है, झूठ पर आधारित
उद्देश्य	सुधार	पराजय
मुख्य निशाना	विशिष्ट, क्षमा न किये गये पाप	भूतकाल की असफलताएं और क्षमा किये गये पाप; स्वभाव में सर्वसाधारण
आपकी प्रतिक्रिया	खेद और पश्चाताप; पापों की क्षमा मांगना	असहायता; पराजय की दशा, बदलाव कैसे लायें यह न जानना; यदि आप क्षमा मांगते हैं तौभी शांति प्राप्त न होना
दोष-भावना उत्पन्न करनेवाले का कार्य	अनुग्रह; क्षमा	दोष लगाना
परिणाम	शांति; स्वतंत्र होने का, शुद्ध किये जाने का और प्रेम किये जाने का एहसास।	शांति नहीं; पराजय; निराशा; हताशा; निकम्मेपन का एहसास। भावनात्मक, आत्मिक एवं शारीरिक रीति से थकान महसूस करना।

* लुईस वॉलफ्रीड जॉन्सन, *फॉलिंग अपार्ट ऑर कमिंग टुगेदर* (मीनियापोलिस: ऑस्बर्ग, 1984) पृष्ठ 66

पाठ ७

क्षमा करने की स्वतंत्रता

"जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है, वैसे ही तू भी हमारे अपराधों को क्षमा कर।"

जीवन में आपसी कलह से बचा नहीं जा सकता है। जैसा कि इव्हरेट फुलम ने प्रभावित करनेवाले शब्दों में कहा है (पृष्ठ 29 पर दिया गया उद्धरण), मनुष्य के पतन का परिणाम है कि हम में से प्रत्येक की प्रवृत्ति यह चाहना है कि संसार मात्र हमारा ही राज्य बने जहाँ हम कहे और दूसरे उसका पालन करें। परिणाम-स्वरूप कलह होते हैं, और इन कलहों में हम सब के पास एक सुअवसर होता है कि बदला या क्षमा में से किसी एक का चुनाव करें।

यीशु ने स्पष्ट रीति से हमें सिखाया कि हम क्षमा करना चुनें। उसने इसे इतना महत्वपूर्ण समझा कि उसने अपनी आदर्श प्रार्थना के मध्य में इस वाक्यांश को सम्मिलित किया: "जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है"। एक ही साँस में जब हम परमेश्वर की क्षमा माँगते है, हम अवश्य ही रुककर यह निश्चित कर लें कि हमने अपने अपराधियों को क्षमा किया है।

यह सर्वदा सरल नहीं होता। उदाहरण के लिये, जब हम कुछ ऐसे व्यक्तियों के साथ रहते हैं या काम करते हैं जो निरंतर दुर्व्यवहार करते, हमें नुकसान पहुंचाते या चिढ़ दिलाते हैं तो नाराजगी बढ़ने देने की और नुकसान के बदले में नुकसान पहुंचाने की परीक्षा निरंतर चलती रहती है। हम सब ऐसी परिस्थितियों की कल्पना कर सकते हैं जब हम दूसरों के साथ अपने कलह के मध्य कभी भी अनुग्रह का हाथ बढ़ाना महसूस नहीं करेंगे।

परन्तु प्रभु की प्रार्थना में यीशु सिखाता है कि हम अवश्य ही क्षमा करने का चुनाव एक स्वेच्छा से किये गये कार्य के रूप में करें ताकि परमेश्वर की क्षमा का अनुभव कर सकें। "इसलिये यदि तुम मनुष्य के अपराध क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें क्षमा करेगा। और यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा न करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हारे अपराध क्षमा न करेगा" (मत्ती 6:12, 14-15)।

मत्ती 5 में यीशु की अपने बैरी से प्रेम करने की शिक्षा के समान ये सिद्धांत भी ग्रहण करने के लिये इतने कठिन हो सकते हैं कि बहुत-से लोग उनकी पूर्णत:

उपेक्षा करना ही पसंद करते हैं। ऐसा संभवत: इसलिये होता है क्योंकि हम नहीं सोचते कि कुछ परिस्थितियों में क्षमा करना तर्कपूर्ण या आवश्यक है। या कदाचित हम यह महसूस नहीं करते कि परमेश्वर को हमें कितना अधिक क्षमा करना होता है या फिर हम भूल गये हैं कि हमारे पापों के कर्ज को क्षमा करने के लिये वह किस हद तक गया है।

परन्तु परमेश्वर यह नहीं चाहता कि हम मात्र उसकी क्षमा का ही अनुभव करें परन्तु चाहता है कि अपने जीवन में कड़वाहट और अक्षमाशीलता की क्षीण कर देनेवाली और बंदी बनानेवाली भावनाओं से स्वतंत्रता का भी अनुभव करें। वह चाहता है कि हम उस पर भरोसा रखें कि हमें हानि पहुंचानेवाले व्यक्ति से पलटा वह लेगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपने जीवन में स्वस्थ सीमाएं न बांधे या हम औरों को उनकी आदतों के अनुसार करते रहने का अधिकार दे दे। इस कथन का तात्पर्य यह है कि हम अपने मनों में इस बात को तरोताजा रखें कि परमेश्वर ने हमें कैसे क्षमा किया है और उसने हम पर कैसी दया दिखाई है। तब हम अपने अपराधी के प्रति भी वैसी ही क्षमाशीलता दिखाने का चुनाव करते हैं। इसके परिणाम अद्‌भुत हो सकते हैं।

यह ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि यीशु जब इन सिद्धांतों को सिखाता था तब वह अपनी सेवकाई के दौरान न टाले जानेवाले विरोध का सामना निरंतर करता था। उस समय के धार्मिक अगुवों को उसकी प्रसिद्धि एवं उस शिक्षा से खतरा लगता था जो उनके कठोर नियमों का खुले आम विरोध करती थी और सार्वजनिक रूप से उनके पाखंड का भेद खोलती थी। यीशु ने क्षमा एवं शत्रु से प्रेम करने की अपनी शिक्षा में उन शब्दों का उपयोग किया जो वास्तव में उसके विरोधियों के द्वारा उसके साथ किये गये व्यवहार का वर्णन करते थे: द्वेष किया, शाप दिया, दुर्व्यवहार किया, शारीरिक आघात पहुंचाया, और उसके परमेश्वर का पुत्र होने के अधिकार को, यदि संभव होता तो, उससे छीन लिया। फिर भी उसने क्षमाशीलता पर अपनी शिक्षा दी *और* आदर्श भी प्रस्तुत किया। उसने क्रूस पर से, व्यथा में होकर, अपना अपमान करनेवालों पर दृष्टि की और कहा, "हे पिता इन्हें क्षमा कर क्योंकि ये जानते नहीं कि क्या कर रहे हैं" (लूका 23:34)।

प्रभु की इच्छा यह है कि हम न मात्र क्रूस पर हमारे लिये प्राप्त की गयी परमेश्वर की क्षमा की स्वतंत्रता का अनुभव करें परन्तु जीवन के कलहों में दूसरों को क्षमा करने की स्वतंत्रता और लाभ का भी अनुभव करें।

१. क) दुर्व्यवहार के प्रति हमारी स्वाभाविक प्रतिक्रियाएं क्या होती हैं?

ख) जब हम इन स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं का अनुसरण करते हैं तो परिणाम क्या होते हैं? आपने अपने जीवन में तथा औरों के जीवन में क्या देखा है?

ग) बदला लेने की भावना के कारण हमारे संसार में उत्पन्न होनेवाली कुछ समस्याएं कौन-सी हैं?

२. क) पिछले पाठ में हमने उस बड़े दाम के विषय में देखा जो परमेश्वर ने हमारे पापों को न्यायपूर्ण रीति से क्षमा करने के लिये चुकाया। इसका सारांश 1 पतरस 2:24 में किस प्रकार दिया गया है?

ख) क्यों क्रूस की क्षमा हम सब के लिये आवश्यक है? हम विश्वास करनेवालों के लिये क्या लाभ हैं? रोमियों 3:23; 6:23

३. परमेश्वर की हमारे प्रति दिखाई गयी अनुग्रहपूर्ण क्षमा के प्रकाश में हमें क्या करना है?

कुलुस्सियों 3:13

४. यीशु ने हमें मत्ती 6:12, 14-15 में क्षमाशीलता के विषय में क्या सिखाया?

५. क) यीशु ने इसे आगे मत्ती 18:21-35 में किस प्रकार समझाया है?

ख) इस दृष्टात में कौन-सा सिद्धांत है?

६. इन लेखांशों में यीशु ने कौन-से संबंधित सिद्धांत सिखाये?

लूका 6:37-38

संदर्भः टिप्पणी 1, *दोष न लगाओ*, पृष्ठ 59

लूका 6:41–42

७. क) यीशु ने मत्ती 5:44 में अपने शिष्यों को और भी क्या सिखाया?

ख) उसने अपने मुक़दमे और क्रूस पर चढ़ाये जाने के दौरान किस प्रकार इन सिद्धांतों का आदर्श प्रस्तुत किया?

लूका 23:34क

1 पतरस 2:23

८. क) क्षमाशीलता के विषय में कौन–से संबंधित सिद्धांत निम्नलिखित वचनों में व्यक्त किये गये हैं?

इफिसियों 4:26

1 पतरस 3:9, 11

नीतिवचन 19:11

ख) रोमियों 12:19, 21 में क्या आज्ञा दी गई है?

ग) क्यों मात्र परमेश्वर ही सिद्धता से न्याय करने के योग्य है?

भजन संहिता 147:5ख

साथ ही, 1 इतिहास 28:9, "... क्योंकि यहोवा मन को जांचता और विचार में जो कुछ उत्पन्न होता है उसे समझता है।"

९. क) बाइबल की सर्वाधिक हृदयस्पर्शी कहानियों में से एक कहानी यूसुफ की है (उत्पत्ति 37-50)। द्वेषभावपूर्ण एवं जलन रखनेवाले भाइयों के द्वारा यूसुफ को मिस्र की गुलामी में बेच देने के बाद, 23 वर्षो तक अलग रहने के बाद, अकाल ने उनके परिवार को फिर से मिलाया। यूसुफ ने, जो फ़िरौन का दाहिना हाथ बन गया था, अपने भाइयों को उदारता से क्षमा कर दिया और उनके तथा उनके परिवार के लिये भोजनवस्तु उपलब्ध कराकर उन्हें अकाल से बचाया। यूसुफ ने बदला लेने के बजाय कौन-सी मनोवृत्ति का चुनाव किया? उत्पत्ति 50:19-21 (45:2-8)।

ख) हमारे जीवनों की सारी परिस्थितियों में परमेश्वर हम से क्या प्रतिज्ञा करता है? रोमियों 8:28

१०. दाऊद ने राजा शाऊल के अन्यायपूर्ण दोषारोपण और हमलों को सहा जिसने उसे बहुत वर्षो तक भगोड़ा बना रहने बाध्य किया। यद्यपि राजा शाऊल दाऊद को मार डालने की खोज में था, दो अवसरों पर दाऊद को मौका मिलने पर भी उसने राजा शाऊल को नहीं मारा। दाऊद ने बदला लेने की तुलना में किस बात पर ध्यान केंद्रित किया? (एक या दो वाक्यों में सारांश दीजिये।)

भजन संहिता 37:1-8

1 शमूएल 26:7-11क

११. कभी-कभी औरों के द्वारा हमें ज़बरदस्ती पहुंचाये गये नुकसान को क्षमा करना असंभव जान पड़ सकता है। फिलिप्पियों 4:13 में, परमेश्वर के प्रेम और क्षमाशीलता को बढ़ाने के लिये आवश्यक सामर्थ का कौन-सा स्रोत हमें मिलता है?

सा रां श

१२. क) परमेश्वर किस आधार पर हमारे पापों के ऋण को क्षमा करता है और हमें दोष-भावना से स्वतंत्र करता है?

ख) परमेश्वर के द्वारा रद्द किये गये ऋण को स्मरण करना दूसरों को क्षमा करने में आपकी कैसे सहायता कर सकता है?

१३. क) आप को इस पाठ में क्षमा तथा क्रोध को नियंत्रण में रखने संबंधित कौन-से महत्वपूर्ण सिद्धांत दिखाई देते हैं?

ख) इन सिद्धांतों का पालन करने से कौन-सी स्वतंत्रता एवं अन्य लाभ मिलते हैं?

१४. जब हम प्रभु की प्रार्थना करते हैं, "जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है" यह वाक्यांश हमें अपने जीवन में किस बात की जांच करने का स्मरण दिलाता है?

पाठ ७ टिप्पणियां

१. *दोष न लगाओ* (6:37) । "लूका 6:27-36 के संदर्भ में, दोष लगाने का अर्थ किसी को अपराधी ठहराकर उसका दण्ड निर्धारित करना है, न्याय के अनुसार वह क्या दण्ड पाने के योग्य है यह घोषित करना, और इसके अतिरिक्त हृदय से यह चाहना है कि उसे उसका प्रतिफल मिले। यीशु ने चेतावनी दी है कि आप न्यायाधीश के रूप में यह निर्णय न दें कि कोई आपका शत्रु है, वह आपका द्वेष करने, आपको शाप देने, आपसे दुर्व्यवहार करने, आपको मारने, या लूटने के लिये द्वेष किये जाने और दण्ड पाने के योग्य है। (6:27-29)। दोष और दण्डाज्ञा प्रेम, दया, देने और क्षमा करने के ठीक उलटा हैं।" *ल्यूक,* लाईफ चेंज सीरीज, नेव्हप्रेस, पृष्ठ 95।

पाठ ८

परीक्षा का सामना करना

"और हमें परीक्षा में न ला . . ."

जितना निश्चित यह है कि जीवन में आपसी कलह से बचा नहीं जा सकता वैसे ही परीक्षाओं से भी नहीं बचा जा सकता है। इसलिये कि यीशु का अपनी सेवकाई के आरंभ में अत्यधिक परीक्षाओं से सामना हुआ था, वह हमारी उन वेदनाओं को जानता था जो हम परमेश्वर की इच्छा के विरुद्ध बलवा करने के खिंचाव का प्रतिरोध करने में अनुभव करते हैं। इसलिये उसने हमें प्रार्थना करना सिखाया कि परमेश्वर "हमें परीक्षा में न" लायें।

निश्चय ही जब हम अपने प्रतिदिन के जीवन में प्रभु का अनुसरण करना चाहते हैं, वह हमें ऐसी बहुत-सी परीक्षाओं से दूर करेगा जो उन लोगों को सहज ही फुसलाती हैं जो उसका अनुसरण नहीं करते। जब हम मसीह को अपने जीवन में ग्रहण करते हैं, वह हमें अपने समान हृदय देता है। हम आगे को न केवल बहुत-सी अस्वस्थ, अरचनात्मक, गतिविधियों की ओर खिंचे नहीं जाते, पर हम इस विचार में भी भ्रामकता देखते है कि खुश रहने के लिये हमारे पास कुछ खास वस्तुएं जैसे कि पैसा, यौन और सामर्थ का होना ज़रूरी है। यदि हम प्रत्येक दिन का आरंभ अपना जीवन परमेश्वर को देते हुये और उसके आत्मा को हमारा नियंत्रण करने की विनती के साथ करते हैं तो वह हमें परीक्षा का सामना करने के समय बड़ी सामर्थ देगा और हमें हमारी शक्ति से परे परीक्षा में नहीं आने देगा।

परन्तु हम परीक्षा का सामना करेंगे ही, क्योंकि हम में वह पुराना पापमय स्वभाव है जो आसानी से परीक्षाओं के स्वामी शैतान की चालों के अनुसार काम करता है। बाइबल हमें बताती है कि वह वास्तविक है, हमें पाप के लिये फुसलाने हेतु भिन्न छलपूर्ण चालों का प्रयोग करते हुये और हम में संदेह, अविश्वास और विद्रोह के बीज बोते हुये हमारे विश्वास की जड़ काटने की खोज में रहता है। जब कि हम बाइबल में शैतान की दो सर्वाधिक जानी-मानी परीक्षाओं का अध्ययन करते हैं - आदम और हव्वा की जिसमें वह सफल हुआ, तथा जंगल में यीशु की जिसमें वह पूर्णतः असफल हुआ - हम शैतान द्वारा प्रायः उपयोग में लायी जानेवाली, परमेश्वर के वचन को छेड़ने की, रणनीति देखते हैं। परमेश्वर ने जो कहा है उसे वह

तोड़ता-मरोड़ता है और हमारी अगुवाई हमारे अपने ही संतोष, अपने ही तर्क और हमारी अपनी ही ख्याति की ओर करता है। पवित्रशास्त्र हमें विश्वास में दृढ़ रहने और शत्रु की परीक्षाओं की साजिशों के प्रति जागृत रहने कहता है।

हमारी जागरूकता में, यह समझ लेना महत्वपूर्ण है कि शैतान उसी क्षेत्र में वार करता है जिसमें हम सर्वाधिक असुरक्षित रहते हैं, हमारे व्यक्तित्व का वह क्षेत्र जो अब तक पूर्णतः परमेश्वर के नियंत्रण के अधीन नहीं हुआ है। परीक्षा की घड़ियों में हम हमारे पुराने पापमय स्वभाव एवं हमारे नये मसीह-सदृश्य स्वभाव, जिसमें पवित्र आत्मा का निवास हुआ है (गलातियों 5:16-17), के मध्य होनेवाले बड़े युद्ध से गुजरेंगे। यह महत्वपूर्ण है कि मात्र इस युद्ध को अनुभव करने के कारण हम ऐसा महसूस न कर लें कि हमने पाप किया ही है। यीशु की भी परीक्षा हुयी थी, परन्तु उसने कभी भी पाप नहीं किया। हम पाप तब ही करते हैं जब हम परमेश्वर की आज्ञा न मानने का चुनाव करते हैं।

यदि हम दुर्बलता के क्षेत्र को पवित्र आत्मा के नियंत्रण में सौंप देने का चुनाव करते हैं तो हमारे अनेको बार असफल होने के बावजूद भी, वह युद्ध का उपयोग उस क्षेत्र में मसीह के गुण और अधिक विकसित करने के लिये कर लेगा। यदि हम वह क्षेत्र पवित्र आत्मा के नियंत्रण के सुपुर्द नहीं करते हैं, वह एक ऐसा आत्मिक गढ़ हो जायेगा जहां से शैतान परमेश्वर के साथ के हमारे संबंध पर और हमले कर सकेगा। परमेश्वर की संतान की नाईं हमारा चरित्र एवं परिपक्वता तब बढ़ती जाती है जब हम जीवन की परीक्षाओं के दौरान, युद्ध में सहायता और मार्गदर्शन के लिये परमेश्वर के आत्मा को पुकारते हुये, परमेश्वर के मार्ग का चुनाव करते रहने का निश्चय कर लेते है।

जे. बी. फिलिप द्वारा याकूब 1:2-4 का किया गया अनुवाद, हमारे जीवन में परीक्षा के परिणाम-स्वरूप उत्पन्न भलाई का वर्णन करता है।

> *हे मेरे भाइयो, जब तुम्हारे जीवन में सब प्रकार की परख और परीक्षाओं की भीड़ हो जाये, उन पर घुसपैठियों की नाईं रोष प्रकट मत करो, परन्तु उनका मित्रों की नाईं स्वागत करो! समझो कि वे तुम्हारे विश्वास की परख करने के लिये और तुम में सहनशक्ति की गुणवत्ता उत्पन्न करने के लिये आतीं हैं। परन्तु जब तक वह सहनशक्ति पूर्णतः विकसित न हो जाये तब तक इस प्रक्रिया को चलने दो, और तुम पाओगे कि तुम उचित प्रकार की स्वतंत्रता के साथ परिपक्व चरित्र के पुरुष (महिलाएं) बन गये हैं।*

परीक्षा की कठिन अग्निपरीक्षा प्रत्येक विश्वासी के लिये निरंतर की चुनौती है। जब

हम प्रार्थना करते है, "हमें परीक्षा में न ला," तब हम पवित्र आत्मा की सामर्थ में परमेश्वर की इच्छा पूर्ण करने की हमारी वचनबद्धता को घोषित करते हैं। इस पाठ में, हम उन बाइबलीय सिद्धांतों को देखेंगे जो जीवन की अविराम परीक्षाओं का सामना करते समय आशा देते हैं।

१. क) परीक्षा की बाइबलीय परिभाषा परमेश्वर के विरुद्ध पाप करने के लिये फुसलाये जाना है। वे कौन-सी कुछ छलपूर्ण परीक्षाएं हैं जिनका सामना लोगों को प्रतिदिन करना पड़ता है?

ख) इन परीक्षाओं में पड़ने के परिणाम क्या होते हैं?

२. क) 1 यूहन्ना 2:16 में परीक्षाओं के किन क्षेत्रों की सूची दी गई है?

ख) मनुष्यजाति के आरंभ में हुई आदम हव्वा की परीक्षा में इन क्षेत्रों का प्रतिबिम्ब कैसे दिखाई देता है?

उत्पत्ति 2:16-17; 3:1-6

ग) यीशु की जंगल में हुई परीक्षा में इन क्षेत्रों का प्रतिबिम्ब कैसे दिखाई देता है? यीशु की सारी प्रतिक्रियाओं में क्या सर्वसामान्य था?

मत्ती 4:1-11

संदर्भ: टिप्पणी 1-2, *यीशु की परीक्षा*, तथा टिप्पणी 3, *शैतान*, पृष्ठ 66

३. यदि हम अपने जीवन में परमेश्वर को प्रसन्न करने के प्रति वचनबद्ध हैं तो वह परीक्षा में हमारी सहायता करने के लिये क्या प्रतिज्ञा करता है?

1 कुरिन्थियों 10:13

इब्रानियों 2:18

इब्रानियों 4:15-16

४. शैतान ने आदम और हव्वा को बहकाने के लिये परमेश्वर के वचन में तोड़-मरोड़ किया। यीशु ने शैतान की परीक्षाओं का प्रतिरोध करने के लिये परमेश्वर के वचन का उपयोग किया। परीक्षाओं का सामना करते समय स्वस्थ, रचनात्मक चुनाव करने में किस प्रकार परमेश्वर का वचन हमारी सहायता कर सकता है?

2 तीमुथियुस 3:16-17

भजन संहिता 119:130; 138

५. याकूब 1:13-15 हमें परीक्षा के विषय में क्या बताता है?

६. क) परीक्षा के साथ एक मसीही के युद्ध का वर्णन निम्नलिखित लेखांश किस प्रकार करते हैं?

रोमियों 7:15-23

गलातियों 5:17

ख) परीक्षाओं पर विजय पाने के विषय में ये लेखांश क्या स्पष्ट करते हैं?

गलातियों 5:16, 25 (रोमियों 8:5-6)

संदर्भः टिप्पणी 3 *पवित्र आत्मा*, पृष्ठ 37, और टिप्पणी 4, *पवित्र आत्मा के काम*, पृष्ठ 67

७. हमें इफिसियों 5:18 में क्या आज्ञा दी गई है?

टिप्पणी: पवित्र आत्मा से भरा जाना परमेश्वर के पवित्र आत्मा द्वारा नियंत्रित किये जाने का चुनाव करने की एक निरंतर की प्रक्रिया है। इफिसियों 5:18 में दाखरस के साथ की गयी तर्कयुक्ति सुझाव देती है कि पवित्र आत्मा के नियंत्रण द्वारा भरा जाना उस व्यक्ति के जीवन पर ठीक उसी प्रकार से सकारात्मक नियंत्रण करता है जैसे कि दाखरस किसी पर नकारात्मक रीति से करता है।

संदर्भ: टिप्पणी 5, *पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होते जाओ,* पृष्ठ 67

८. पवित्र आत्मा से भरे जाने, या नियंत्रित किये जाने, और सामर्थ पाने के लिये नितांत आवश्यक है कि हम**:**

1) हमारे जीवन में कोई भी पाप हो तो उसे मान लें (1 यूहन्ना 1:9);

2) अपने जीवन का प्रत्येक क्षेत्र परमेश्वर को अर्पित करें (रोमियों 12:1-2); और

3) परमेश्वर से निवेदन करें कि हमें अपने आत्मा से भर दे

यीशु लूका 11:13 में क्या प्रतिज्ञा करता है?

९. पवित्र आत्मा के द्वारा नियंत्रित किये जाने का अर्थ मसीह में जीना और उसे हम में अपना जीवन जीने देना है। यूहन्ना 15:5 में वह हम से क्या कहता है जो परीक्षा से संबंधित है?

१०. जब हम परीक्षा में गिर जाते हैं, हम किस प्रकार वापस रास्ते पर आ सकते हैं? (उपरोक्त क्रमांक 7 को भी देखिये)

1 यूहन्ना 1:9

११. परमेश्वर का व्यवहार हमारे प्रति कैसा रहता है जब हम उसे प्रसन्न करने हेतु परीक्षा पर विजयी होने के लिये संघर्ष करते हैं?

भजन संहिता 103:8-14

सा रां श

१२. "हमें परीक्षा में न ला" इस प्रार्थना का आपके लिये क्या अर्थ है?

१३. क) आज आपके जीवन में कौन-सी परीक्षाएं सर्वाधिक प्रबल हैं?

ख) परमेश्वर इस परीक्षा में आपकी सहायता कैसे करना चाहता है?

१४. क) जब हम पर परीक्षा आती है तब हमारे जीवन में पवित्र आत्मा तथा हमारे पुराने पापमय स्वभाव के बीच होनेवाले युद्ध का वर्णन कीजिये।

ख) जब आप इस युद्ध का अनुभव करते हैं तब आप पाप क्यों नहीं कर रहे हैं?

१५. मात्र पवित्र आत्मा ही हमें परीक्षा पर विजयी होने की सामर्थ दे सकता है। इस सामर्थ का अनुभव करने के लिये आपको क्या करना अवश्य है?

१६. पवित्र आत्मा तथा आपके जीवन के संबंध में आपकी प्रार्थना क्या है? यदि आपने मसीह से कभी मांगा ही नहीं है कि आपको अपने आत्मा से भर दे - नियंत्रित तथा समर्थ करे - तो संभंवत: आप इस वक्त ऐसा पहली बार करना चाहेंगे। नीचे एक प्रार्थना का सुझाव दिया जा रहा है जिसे आप प्रतिदिन कर सकते हैं:

> *प्रभु यीशु, मैं मान लेता हूं कि मैं मसीही जीवन को मेरी अपनी सामर्थ में नहीं जी सकता। मैं तेरा धन्यवाद करता हूं कि तू ने मेरे लिये क्रूस पर अपने प्राण देने के द्वारा मेरे पापों को क्षमा किया है। अब मैं तुझे निमंत्रण देता हूं कि मेरे जीवन का नियंत्रण अपने हाथों मे ले। अपने पवित्र आत्मा से मुझे भर दे जैसे भरे जाने की आज्ञा तू ने मुझे दी है और मेरे मांगने पर जैसे करने की प्रतिज्ञा की है। प्रभु, अपने आत्मा की सामर्थ में होकर मुझ में अपना जीवन जी। इस प्रार्थना को मैं यीशु के नाम से मांगता हूं। आमीन।*

पाठ ८ टिप्पणियां

१. *जंगल में यीशु की परीक्षा* (मत्ती 4:1-11)। "उस दुष्ट ने, जिसे शैतान भी कहा जाता है, हव्वा की परीक्षा अदन के बाग में की, और यहां उसने यीशु की परीक्षा जंगल में की है। शैतान एक गिराया गया स्वर्गदूत है। वह *वास्तविक* है, प्रतीकात्मक नहीं, और जो परमेश्वर का अनुसरण करते हैं और उसकी आज्ञा का पालन करते हैं उनके विरुद्ध लगातार लड़ता रहता है। शैतान की परीक्षाएं वास्तविक हैं और वह सर्वदा प्रयास करता है कि हम परमेश्वर के तरीके से जीने के बजाय उसके तरीके से या अपने तरीके से जीये। यीशु एक दिन सम्पूर्ण सृष्टि पर राज्य करेगा, परन्तु शैतान ने प्रयास किया कि यीशु को विवश करे और उससे ऐसा करवाये कि वह समय से पहले ही अपने राजाधिकार की घोषणा कर दे। यदि यीशु ने हार मान ली होती, उसका पृथ्वी पर का मिशन - हमारे पापों के लिये अपना प्राण देना और हमें अनन्त जीवन पाने का मौका देना - खो गया होता। जब परीक्षाएं असाधारण रूप से प्रबल लगें या जब आप सोचें कि अपनी हार को तर्कपूर्ण बता सकते हैं, इस बात पर सोचिये कि संभवत: शैतान आपके या किसी और के जीवन के लिये ठहराये गये परमेश्वर के उद्देश्य में रुकावट लाने का प्रयास कर रहा होगा।" द *एनआईव्ही एलएबी*, पृष्ठ 1648

२. "*यीशु की परीक्षा मंदिर के भीतर नहीं हुई थी*, ना ही उसके बपतिस्मा के समय, परन्तु जंगल में हुई थी जहां वह थका हुआ, अकेला और भूखा, और इस प्रकार सर्वाधिक असुरक्षित था। वह दुष्ट हमे प्राय: तब बहकाता है जब हम असुरक्षित होते हैं - जब हम शारीरिक या भावनात्मक तनाव में (उदाहरण के लिये, अकेले, थके, बड़े निर्णयों के बोझ से दबे, या अनिश्चितता का सामना कर रहे) होते हैं। परन्तु वह हमारी सामर्थ के द्वारा भी हमारी परीक्षा करना चाहता है, जहां हमारे अभिमानी होने की गुंजाइश सर्वाधिक होती है। नितांत आवश्यक है कि हम हर समय उसके हमलों पर निगरानी रखें।" द *एनआईव्ही, लाइफ एप्लिकेशन बाइबल*, पृष्ठ 1648

३. *शैतान* का अर्थ "दोष लगानेवाला" है। उसे दुष्ट भी कहा गया है। जब कि शैतान और दुष्ट शत्रु या दुष्टात्माएं किसी-किसी के लिये अविश्वसनीय होती हैं, यह समझ लेना महत्वपूर्ण है कि बाइबल उनके विषय में क्या कहती है। सुसमाचारों में, यीशु ने अनेक घटनाओं में लोगों को दुष्ट आत्माओं से छुड़ाया। बाइबल शैतान को एक दूत बतलाती है जिसने स्वर्ग में परमेश्वर के विरुद्ध किये गये विद्रोह का नेतृत्व किया था। परिणाम-स्वरूप, परमेश्वर ने उसे उसके संगी विद्रोही दूतों के दल के साथ स्वर्ग से बाहर निकाल दिया (2 पतरस 2:4; प्रकाशितवाक्य 12:7-9)। शैतान के नेतृत्व में ये दूत-जीव दुष्टात्मा के रूप में जाने गये और अपनी योजनाओं और

मनुष्यों पर किये जानेवाले अपने हमलों में वे संगठित हैं (इफिसियों 6:12)। शैतान और उसकी सेना इस कार्य में लगी रहती है कि लोग शैतान की आराधना करें (लूका 4:7) और लोगों को परमेश्वर की ओर फिरने से रोके (लूका 4:8)। शैतान के पराजय की प्रतिज्ञा उत्पत्ति 3:15 में की गई है और उसे मसीह के क्रूस में पूरा किया गया (कुलुस्सियों 2:15)। पुन:रुत्थान में, मसीह शैतान और उसकी शक्ति पर विजयी हुआ था। इसलिये, यीशु मसीह सम्पूर्ण जगत का स्थायी शासक है। शैतान अभी भी एक शक्ति है जिसे तब तक महत्वपूर्ण माना जाना है जब तक मसीह जगत का न्याय करने के लिये वापस नहीं आता (मत्ती 16:27)। शैतान जगत के उस हिस्से का अस्थायी शासक है जो उसके पीछे चलने का चुनाव करता है। याकूब 4:7 विश्वासियों को निर्देश देता है कि अपने जीवन में परमेश्वर के नेतृत्व के प्रति निरंतर समर्पित होने के द्वारा उस दुष्ट का (या दुष्टात्माओं की सेना का) प्रतिरोध करें।

४. *पवित्र आत्मा के काम।* इसलिये कि पवित्र आत्मा एक मसीही के जीवन में सामर्थ का स्त्रोत है, यह जानना महत्वपूर्ण है कि वह कौन है। सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में, पवित्र आत्मा को परमेश्वर पिता तथा परमेश्वर पुत्र के साथ ईश्वरत्व के एक पूर्ण एवं पृथक व्यक्ति के रूप में प्रकट किया गया है। ईश्वरत्व का एक व्यक्ति होने के नाते, पवित्र आत्मा अनंत, सर्वव्यापी, सर्वसामर्थी, पूर्णत: बुद्धिमान, पूर्णत: न्यायी, और पूर्णत: भला है (इब्रानियों 9:14; भजन 139:7-10; 1 कुरिन्थियों 2:10-11)। पवित्र आत्मा की पृथक भूमिका एक पवित्र करनेवाले की है जो हमें स्वतंत्र करता है कि मसीह में नया जीवन जीयें (2 कुरिन्थियों 3:17)। वह पवित्र आत्मा ही है जो हमारी अगुवाई आत्मिक नये जन्म की ओर करता है, हमारे पास मसीह की उपस्थिति को लाता है, हमें परमेश्वर के सम्पर्क में बनाये रखता है, हमें परमेश्वर का प्रेम जताता है, हमें गवाही देने की और मसीही जीवन जीने की सामर्थ देता है, और हमें आत्मिक वरदान देता है जिनके द्वारा हम मसीह के देह की सेवा करते हैं (तीतुस 3:5; यूहन्ना 14:16-18; रोमियों 8:26; रोमियों 5:5; प्रेरितों के काम 1:8; रोमियों 8:5-9; 1 कुरिन्थियों 2:4-12)। वह सिखाता है, प्रोत्साहित करता है, शांति देता है, हमारे लिये निवेदन करता है, और सम्पूर्ण सत्य में हमारी अगुवाई करता है (यूहन्ना 16:13; प्रेरितों के काम 9:31; यूहन्ना 14:16; रोमियों 8:27)। रोमियो 8 हमें बताता है कि हमारे मनों को पवित्र आत्मा के द्वारा नियंत्रित होने देना ही 'जीवन और शांति' की (8:6) और उस पाप पर विजय पाने की कुंजी है जो हमें अपने वश में करने की खोज में रहता है। टिप्पणी 3 भी देखिये, *पवित्र आत्मा,* पृष्ठ 38

५. *पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होते जाओ* (इफिसियों 5:18) का संकेत आत्मा की

मात्रा की ओर नहीं है (जैसे कि आधे भरे प्याले को पूरे भरे प्याले की तुलना में और भरा जाना आवश्यक होता है)। इस वाक्यांश का संकेत उस निरंतर चुनाव की ओर है जो हम पवित्र आत्मा को हमारे जीवन पर पूर्ण नियंत्रण करने देने के लिये कर सकते है। दाखरस के साथ की गई तर्कयुक्ति ("दाखरस से मतवाले न बनो") का अर्थ यह नहीं है कि हम पवित्र आत्मा से ऐसे मतवाले बनते हैं जैसे कि हम कुछ देखते नहीं, सुनते नहीं, महसूस नहीं करते या वास्तविक ढंग से या स्वयं को नियंत्रण में रखते हुये तर्क नहीं करते। पवित्र आत्मा हमें ईश्वरीय दृष्टिकोण, शक्ति, प्रेम और संयम (2 तीमुथियुस 1:7) तथा गलातियों 5:22-23 में सूचीबद्ध फल प्रदान करते हुये हम में मसीह का जीवन उत्पन्न करता है।

पाठ ९

बुराई से रक्षा

“. . . परन्तु बुराई से बचा।”

किसी को मात्र अखबार पढ़ने या टेलिविज़िन देखने की आवश्यकता है कि यह अवलोकन कर ले कि बुराई एक ऐसी वास्तविकता है जो प्रतिदिन देश एवं व्यक्तियों को विनाश से क्षति पहुंचाती है। बहुतों के लिये, बुराई का प्रत्युत्तर भय और निराशा होता है। परन्तु मसीही जन के पास आशा हो सकती है। सम्पूर्ण पवित्रशास्त्र में परमेश्वर स्वयं को हमारे लिये बुराई के समय उपलब्ध शरणस्थान एवं उद्धार के रूप में प्रकट करता है, और वह उन विध्वंसक ताकतों से अधिक शक्तिशाली है जिनका इस संसार में हम सामना करते हैं। परमेश्वर ने मृत्यु को भी अपने साथ के अनंत जीवन में, बुराई से रहित नये आकाश एवं नयी पृथ्वी में प्रवेश करने का द्वार बनाया है। इसी आशा एवं रक्षा हेतु परमेश्वर पर हमारी निर्भरता की स्वीकृति में, यीशु ने हमें “पिता . . . हमें . . . बुराई से बचा” यह प्रार्थना करना सिखाया।

इस निवेदन को समझने के लिये, हमें उन यूनानी शब्दों को देखना होगा जो *बचा* और *बुराई* के लिये प्रयोग हुये हैं। बचा शब्द का अनुवाद *apo rhuomai* शब्दों से किया गया है जिनका अर्थ *से छुड़ाना, आरंभ से अंत तक सुरक्षित रखना, और इस प्रकार, बचाना* है। *poneros* शब्द उसका द्योतक है *जो प्रभाव तथा परिणाम में बुरा, घातक, विनाशक, स्वभाव में हानिकारक है।* यह उसके ठीक उलटा है जो दयालु, अनुग्रहकारी तथा सेवा का है।

इस शब्द का संज्ञा की तरह किया गया प्रयोग यह दर्शाता है कि यीशु शैतान के विषय में कह रहा था, जिसे बाइबल हमारे संसार में व्याप्त सारी बुराई का जन्मदाता होने का श्रेय देती है।[1] यीशु ने अपने मानवीय अनुभव के दौरान शैतान तथा उसकी दुष्टात्माओं की ताकत का सामना किया था और जाना था कि मात्र परमेश्वर ही हमें इस शत्रु की शक्तिशाली एवं दीर्घ समय से चलनेवाली विनाशक साजिशों में आरंभ से अंत तक सुरक्षित रख सकता है। प्रभु की प्रार्थना में यीशु हमें सिखा रहा है कि हमारा स्वर्गीय पिता ऐसा करने के लिये उपलब्ध और सक्षम है।

अतः, पिता से हमें बुराई से बचाने की प्रार्थना करना, अनिवार्यतः, हमें बुराई की पकड़ में पड़ने से बचाने का, हमें उसमें आरंभ से अंत तक ले चलने का, और हमें

शैतान के विनाशक इरादों से बचाने का निवेदन करना है।[2] यद्यपि शैतान दबे पांव – ज़बरदस्त परीक्षाओं, कठिन परिस्थितियों या अन्य लोगों की क्रूरता के द्वारा – हमारा पीछा करता है, हम जान सकते हैं कि परमेश्वर "हमारी ओर है" और उससे अधिक सामर्थी है जो हमारे सामने आनेवाली बुराइयों के पीछे होता है। शैतान परमेश्वर के द्वारा सीमित कर दिया गया है। परमेश्वर की अनुमति के बिना कुछ भी हमें स्पर्श नहीं कर सकता, और तब वह मात्र हमारी भलाई के लिये ही होने दिया जाता है।[3] जैसे कहा गया है, स्वयं मृत्यु भी मसीह में विश्वास करनेवाले के लिये मात्र विजय ही है।

परमेश्वर द्वारा बुराई से बचाये जाने में मात्र प्रबल शत्रु से रक्षा ही सम्मिलित नहीं होती। परमेश्वर हमारे बुराई के साथ होनेवाले संघर्ष का उपयोग हमें ऐसे समग्र लोग बनाने में और परिवर्तित करने में करता है जो उसके गुणों को प्रतिबिम्बित करते हों। डब्लु. फिलिप्प केलर अपनी पुस्तक *अ लेमेन लुक्स एट द लॉर्डस् प्रेयर* में एक बालक के चलना सीखने की तुलना करते हुये इस प्रक्रिया में पिता के प्रेम को दर्शाते हैं। जैसे एक प्रेमी पिता जब उसका बच्चा गिरते, टकराते, चोट खाते हुये आगे बढ़ता है तो उसे सहायता देनेवाला और ध्यान देनेवाला और प्रोत्साहन देनेवाला होता है, ठीक वैसे ही परमेश्वर आत्मिक रीति से "चलना" सीखने में हमारी सहायता करता है जब हम हमारे भीतर की तथा संसार की बुराई से युद्ध करते हैं। उसकी इच्छा यह नहीं है कि हम अपनी दुर्बलताओं और असफलताओं के कारण निराशा की हालत में रहें, परन्तु यह है कि सीखने की इस प्रक्रिया में वह हमारे साथ रहे, उन संघर्षों के दौरान सामर्थ और अगुवाई और प्रोत्साहन देता रहे जो हमारे जीवनों में सम्पूर्णता तथा उसके साथ गहरा संबंध विकसित करते हैं।

केलर अपनी पुस्तक में, बुराई से परमेश्वर के बचाव को अनुभव करने के लिये तीन कुंजियों का उल्लेख करते हैं। प्रथम, जब हमारा बुराई से सामना हो तब हमें सहायता पाने के लिये सोच-समझकर परमेश्वर की ओर मुड़ना चाहिये। एक सरल, सच्ची प्रार्थना में हम उसे बता सकते हैं कि उस युद्ध से निपटना किस प्रकार हमारे बस के बाहर है और उससे निवेदन कर सकते हैं कि वह अपने आत्मा के द्वारा हमें बिना गिरे उससे पार ले जाये।

बुराई से परमेश्वर के बचाव को अनुभव करने के लिये दूसरी कुंजी सामान्य ज्ञान का ध्यान रखना है। पौलुस ने तीमुथियुस से कहा, "इन (बुरी) बातों से भाग. . ." (1 तीमुथियुस 6:11)। हमारे जीवन के क्षेत्रों में जहां हम पतन के लिये सर्वाधिक असुरक्षित रहते हैं, आवश्यकता है कि हम उस भीतरी आवाज की ओर ध्यान दें जो हमें उन स्थानों, परिस्थितियों या लोगों से दूर रहने कहती है जो हमें गिराते हैं। पवित्र

आत्मा भी हमें चेतावनी देगा जब हम खतरे को देख नहीं सकते हैं।

अंतिम कुंजी शैतान का सामना करने तैयार रहना है (याकूब 4:7)। जब हम भय, संदेह, अविश्वास या परमेश्वर के मार्ग से विद्रोह करने के आकर्षण को प्रबल होता हुआ महसूस करते हैं, हम अवश्य स्मरण करें कि "आत्मा की तलवार" जो शत्रु का नाश करती है वह परमेश्वर का वचन है (इफिसियों 6:17)। हम पहले स्वयं को परमेश्वर के प्रति समर्पित करते हुये और फिर उस परिस्थिति से संबंधित पवित्रशास्त्र-भाग का हवाला देते हुये शैतान का सामना करते हैं। यीशु ने जंगल में हुई अपनी परीक्षा के समय यही किया था (मत्ती 4)। हम जितना अधिक पवित्रशास्त्र का अध्ययन करेंगे, उसे कंठस्थ करेंगे उतना ही अधिक यह सरल होगा।

बाइबलीय सच्चाई के ये सारे मुद्दे निश्चित रूप से प्रभु की प्रार्थना, "पिता . . . हमें . . . बुराई से बचा" में हैं। इस पाठ में, हम इन पवित्रशास्त्र के सिद्धांतों में से कुछ की ओर ध्यान देंगे।

१. क) टीका में बुराई की क्या परिभाषा दी गई है (अनुच्छेद 2)?

ख) प्रभु की प्रार्थना में यीशु किस बचाव की बात कर रहा है? (टीका को पुन: देखिये, अनुच्छेद 2, 4)।

२. हमारे संसार में व्याप्त बुराई के विरुद्ध युद्ध के विषय में इफिसियों 6:10-13 हमें क्या बताता है?

संदर्भ: शैतान, पृष्ठ 66

३. क) उन शब्दों और वाक्यांशों की सूची बनाइये जो इफिसियों 6:14-17 में परमेश्वर के हथियारों का वर्णन करते हैं। युद्ध में हमारी रक्षा किस से होती है?

ख) कौन-से व्यावहारिक चुनाव हमारे परमेश्वर के हथियार बांधने से सहमत होते हैं?

नीतिवचन 4:14-15

1 तीमुथियुस 6:11

रोमियों 6:13

४. क) बुराई के विरुद्ध के युद्ध में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कुंजी क्या है?

इफिसियों 6:18

ख) जीवन के युद्ध में प्रार्थना तथा परमेश्वर की स्तुति की सामर्थ का प्रभावपूर्ण वर्णन 2 इतिहास 20 में किया गया है। इस वृत्तान्त का सारांश लिखिये।

2 इतिहास 20:1–6, 12–15, 21–24

ग) यहूदा देश के लिये विजय की कुंजियां क्या थीं?

घ) यह वृत्तान्त हमें क्या करने प्रोत्साहित करता है?

५. क) हमें युद्ध के लिये भीतर से बल कौन देता है?

रोमियों 8:26

इफिसियों 3:16, 20

ख) युद्ध में पवित्र आत्मा हमें किस प्रकार की आत्मा देता है?

2 तीमुथियुस 1:7

1 यूहन्ना 4:4

६. हम बुराई के विरुद्ध युद्ध के द्वारा कैसे परिवर्तित होते जाते हैं?

रोमियों 5:3–5 (याकूब 1:2–4)

1 पतरस 5:10

७. जब हम विश्वास और समर्पण के इन चुनावों को करते हैं, हम किस बात के विषय में विश्वस्त रह सकते हैं?

भजन संहिता 37:23–24

यशायाह 43:2–3क

1 यूहन्ना 5:18

८. हम बुराई के विरुद्ध जिन युद्धों का सामना करते हैं उनके विषय में पवित्रशास्त्र के ये भाग क्या निर्देश देते हैं?

1 पतरस 5:8–9

संदर्भः टिप्पणी 2, *प्रतिबंधित शैतान*, पृष्ठ 74

९. परमेश्वर हमें बुराई से बचाता है इसका अंतिम परिणाम क्या है?

2 तीमुथियुस 4:18

यहूदा 24–25

सा रां श

१०. यीशु की प्रार्थना, "पिता . . . हमें . . . बुराई से बचा," में कौन-सी प्रतिज्ञा छिपी है?

११. बुराई के विरुद्ध परमेश्वर की रक्षा प्राप्त करने हेतु आप कौन-से चुनाव कर सकते हैं?

१२. परमेश्वर आपके जीवन में आपके बुराई के साथ युद्ध के द्वारा क्या करना चाहता है?

१३. क्या आपके जीवन में कोई क्षेत्र है जहां अभी इस समय आप युद्ध कर रहे हैं? इस पाठ में आपने क्या प्रोत्साहन प्राप्त किया है?

पाठ ९ टिप्पणियां

१. **संदर्भः** टिप्पणी 3, *शैतान*, दुष्ट पृष्ठ 66

२. *प्रतिबंधित शैतान*, "मसीहियों के जीवन में शैतान के सामर्थ को समझने के लिये, भूमि में गाड़े गये एक खूंटे की कल्पना कीजिये। इस खूंटे से जुड़ी हुई लम्बी सांकल से एक गरजता, भूखा सिंह बंधा हुआ है। जैसे ही एक मसीही वहां से गुजरता है, सिंह उसे देखता है, गरजता है, और उसकी ओर ताकतवार झपट्टा मारता है, परन्तु वह सांकल के द्वारा रोक लिया जाता है और बस वह उतनी ही दूर तक जा सकता है। वह मात्र दहाड़ सकता है। तथापि, स्वतंत्र इच्छा के कारण, एक मसीही, यदि वह चाहता है तो, उस सांकल की त्रिज्या से बननेवाले घेरे में चल सकता है। परन्तु वह खा लिया जायेगा, क्योंकि उस हालत में वह शैतान की बराबरी नहीं कर सकता। तथापि, शैतान उस मसीही जन को उसके दायरे में चलने के लिये बाध्य नहीं कर सकता। और ना ही परमेश्वर उसे वास्तविक खतरे के उस घेरे में चलने ले जायेगा; वह केवल उस मसीही की परख होने देगा। परमेश्वर ने शैतान की शक्ति की सीमा बांध रखी है। शैतान हमें विद्रोह तथा पाप में नहीं ले जा सकता जब तक

कि हम उसके साथ मिलकर काम करने के लिये सहमत नहीं होते। पवित्रशास्त्र हमें बताता है कि मसीहियों को अंधकार के उस राज्य से बाहर निकाला गया है जिस पर शैतान का शासन है और परमेश्वर के प्रिय पुत्र के राज्य में प्रवेश कराया गया है (कुलुस्सियों 1:13)। यह कुछ इस प्रकार है जैसे कि हमारे माथे पर इन शब्दों का चित्रण हो: "नये प्रबंध के अन्तर्गत।" अब शैतान का हम पर कोई अधिकार नहीं है जब तक हम उसे वह नहीं देते।" इव्हरेट फुलम, *लिविंग द लार्डस् प्रेयर*, पृष्ठ 100–101

३. संदर्भः टिप्पणी 4, सी. एच. वेल्श, पृष्ठ 38

पाठ १०

राज्य, पराक्रम और महिमा

"क्योंकि राज्य और पराक्रम और महिमा सदा तेरे ही हैं। आमीन।"

प्रभु की प्रार्थना के अंत में दी गई स्तुति (Doxology) आरंभिक समय से मौजूद सम्पूर्ण अथवा आंशिक नया नियम की 6,000 हस्तलिपियों में से लगभग केवल आधे में ही मिलती है। प्रख्यात पाठ-विषयक विशेषज्ञ मानते हैं कि संभवत: इस प्रार्थना को सार्वजनिक आराधना के लिये अधिक उपयुक्त बनाने हेतु, बाद के लेखकों के द्वारा, इसे जोड़ा गया था।

यीशु के ओठों से नहीं तो निश्चय ही पवित्र आत्मा की प्रेरणा के द्वारा प्रभु की प्रार्थना की स्तुति (Doxology) उस प्रार्थना का आरंभ तथा अंत आराधना से करती है। इसके प्रमुख विचार स्पष्टत: बाइबलीय हैं और दाऊद की 1 इतिहास 29:11 में लिखी प्रार्थना से मेल खाते हैं - "हे यहोवा! महिमा, पराक्रम, शोभा, सामर्थ्य और वैभव तेरा ही है; क्योंकि आकाश और पृथ्वी में जो कुछ है, वह तेरा ही है; हे यहोवा! राज्य तेरा है, और तू सभों के ऊपर मुख्य और महान ठहरा है।"

इन कारणों से, यह उपयुक्त जान पड़ता है कि हमारे प्रभु की प्रार्थना के अध्ययन का समापन उसकी परंपरागत स्तुति (Doxology) के पीछे छिपे अर्थ की ओर ध्यान देते हुये करें।

"राज्य तेरा ही है" कहना इस बात की पुन: पुष्टि करना है कि प्रभु हमारे जगत के ऊपर सर्वसत्ताधारी है। राजा और राष्ट्र उभरते हैं और गिरते हैं और जो कुछ वे कर सकते हैं उसमें वे परमेश्वर के द्वारा सीमित किये गये हैं। यद्यपि शैतान के पास प्रभावित करने की बड़ी ताकत है, बाइबल यह अत्यंत स्पष्ट करती है कि भलाई और बुराई के बीच की लड़ाई में अंतत: प्रभु विजयी होगा। यद्यपि उसने ऐसे जगत की रचना की जिसमें बुराई संभव थी, वह उसकी अनुमति के द्वारा और उसके उद्देश्यों को पूरा करने हेतु अस्तित्व में है। बाइबल की भविष्यवाणियां और घटनाएं प्रमाणित करती हैं कि इतिहास की घटनाओं तथा नियति के ऊपर परमेश्वर सर्वोच्च राज्य करता है। उसकी अंतिम पुस्तक, प्रकाशितवाक्य, हमें बताती है कि अंत में प्रभु हमारे अस्तव्यस्त जगत को एक नये अनंतकालिक आकाश और पृथ्वी से बदल देगा जिसमें बुराई नहीं होगी, जो परमेश्वर की धार्मिकता से भरपूर और मसीह यीशु के

द्वारा, जिसे परमेश्वर ने सर्वदा के लिये राजाओं का राजा घोषित किया है, शासित होगी (प्रकाशितवाक्य 17:14; 19:16)।

इस प्रकार, "राज्य तेरा ही है" हमें यह स्मरण दिलाता है कि हमारा स्वर्गीय पिता सर्वसत्ताधारी है और हमें आदेश देता है कि हम अपने प्रतिद्वंद्वी राज्यों का परित्याग कर दें और उसे अपने जीवन में राज्य करने दें।

"पराक्रम तेरा ही है" यह हमें स्मरण दिलाता है कि सारी सामर्थ्य परमेश्वर के हाथों में है। वह, आकाशगंगाओं को और साथ ही साथ सब से छोटे जीव के जीवन को भी क्रमबद्ध करते हुये, अपनी सृष्टि को संभालता है। प्रत्येक व्यक्ति का अस्तित्व और साथ ही जिस किसी बात में वह घमंड़ करता है - सुंदरता, प्रतिभाएं, बुद्धि, धन, या और कोई बात - परमेश्वर से ही मिलती है। इससे आत्म-प्रशंसा की गुंजाइश ही नहीं रह जाती। उसकी सामर्थ्य न मात्र वर्तमान में हमारे जीवनों को संभालती है, परन्तु एक दिन ऐसा राज्य लायेगी जिसमें विश्वासी अनंतकाल तक निवास करेंगे। "पराक्रम तेरा ही है" यह हमें आह्वान करता है कि उस **एक** के सम्मुख दण्डवत करें जो हमारे जीवनों को अपने हाथों में रखता है।

"महिमा तेरी ही है" यह हमें परमेश्वर के महिमामय गुणों का स्मरण दिलाता है। जितना अधिक हम अपने स्वर्गीय पिता के गुणों को देखते हैं - उसकी महानता, न्याय, प्रेम, उदारता, अनुग्रह, - उतना ही अधिक हम उसके अनंतकालिक महिमा को देख रहे हैं। सब-कुछ परमेश्वर की महिमा के लिये विद्यमान है - उसका वैभव, पवित्रता, भलाई, और सिद्धता प्रकट करने के लिये है।

परमेश्वर की महिमा का सर्वाधिक महान प्रकटीकरण उसके पुत्र, यीशु मसीह, में है। उसके जीवन, मृत्यु, पुनःरुत्थान और स्वर्ग में वर्तमान राज्य के द्वारा, वह परमेश्वर के सिद्ध गुणों का और उसकी उस लगन का प्रतिबिम्ब है जो मानवजाति में से अपनी महिमा में *सहभागी होने* के उद्देश्य से बेटे और बेटियों को लाने के लिये है। जब हम अपने जीवन परमेश्वर को समर्पित करते हैं, पवित्र आत्मा हम में परमेश्वर के गुणों का निर्माण करने में प्रसन्न होता है, हमें इस योग्य बनाते हुये कि हम अपने वचन और काम और रूप के द्वारा उसके स्वभाव को परावर्तित करें। जैसे कि चंद्रमा सूर्य के प्रकाश को परावर्तित करता है उसी तरह हम इस लिये बनाये गये हैं कि उसकी महिमा को सर्वदा परावर्तित करें।

अंत में, "आमीन" जिससे प्रभु की प्रार्थना का समापन होता है वह हमारी प्रार्थना को समाप्त करने के लिये प्रयोग किया जानेवाला एक शब्द मात्र ही नहीं है। इसका अर्थ "इसलिये ऐसा ही हो" या "तथास्तु" है। "आमीन" कहना यह कहना है, "हां,

यह सही है; मैं सहमत हूं। ऐसा ही होने दीजिये; यही बात होवे।" जब हम अपने स्वर्गीय पिता की स्तुति करते हैं, पहिले उसके राज्य की खोज करते हैं, अपनी आवश्यकताओं के लिये उस पर भरोसा रखते हैं, उसकी क्षमा को प्राप्त करते हैं, और परीक्षा तथा बुराई पर विजय पाने के लिये उसकी सामर्थ्य को प्राप्त करते हैं, हम निश्चित रह सकते हैं कि वह हमारे जीवनों के लिये अपने भले और प्रेमपूर्ण उद्देश्य को पूरा करेगा। प्रभु की प्रार्थना का "आमीन" परमेश्वर में रखे गये विश्वास की तथा अपनी इच्छा से बढ़कर उसकी इच्छा के प्रति वचनबद्धता की अंतिम घोषणा है।

शिष्य ने चाहा था कि यीशु उसे अपने समान प्रार्थना करना सिखाये ताकि उसकी अद्भुत सेवकाई के भेद को प्रकट कर दे। और यीशु ने वह उसके लिये तथा हमारे लिये प्रभु की प्रार्थना में प्रदान कर दिया।

१. "राज्य सदा तेरा ही हैं" का अर्थ क्या है?

२. क) भजन संहिता 93 प्रभु के राज्य के विषय में क्या घोषित करता है?

भजन संहिता 93:1 (3, 4ख)

भजन संहिता 93:2

भजन संहिता 93:5

भजन संहिता 89:14

ख) भजन संहिता 89:15-17 उन लोगों का वर्णन कैसे करता है जो प्रभु का आदर करते हैं और उसे अपने जीवन में राजा होने देते हैं?

३. "पराक्रम सदा तेरा ही हैं" इसका संकेत किसकी ओर है?

४. क) मनुष्य का झुकाव अपने स्वयं के तर्क एवं शक्ति में घमंड़ करने की ओर होता है। निम्नलिखित वचन क्या कहते हैं?

व्यवस्थाविवरण 8:17-18क (1 इतिहास 29:12)

प्रेरितों के काम 17:28क

यशायाह 40:6-8, 22क

यशायाह 40:23-24

ख) निम्नलिखित वचनों में परमेश्वर की सामर्थ्य का वर्णन कैसे किया गया है?

यशायाह 40:12, 15

यशायाह 40:22ख, 26

यशायाह 40:13-14

५. जो परमेश्वर की सामर्थ्य और बुद्धि में भरोसा रखते हैं उनके लिये उसकी प्रतिज्ञा क्या है?

यशायाह 40:11

यशायाह 40:27-29

यशायाह 40:31

६. क) परमेश्वर ने कौन-सी सामर्थ्य पुन:रुत्थित प्रभु यीशु मसीह के सुपुर्द कर दी है?

इब्रानियों 1:3क; कुलुस्सियों 1:17

ख) मसीह में विश्वास के द्वारा हमारे जीवन में जो सामर्थ्य उत्पन्न होती है उसका वर्णन ये लेखांश कैसे करते हैं?

इफिसियों 1:18-20

इफिसियों 3:16, 20

७. "महिमा सदा तेरी ही हैं" का अर्थ क्या है?

८. क) प्रभु की महिमा वह उचित आदर है जो उसे उस बात के लिये मिलना चाहिये जो वह है (पुनर्विलोकन के लिये देखिये परमेश्वर की विशेषताओं की सूची, पृष्ठ 28)

दाऊद 1 इतिहास 29:11 में क्या घोषित करता है?

ख) परमेश्वर के महिमामय गुणों का वर्णन निम्नलिखित वचन किस प्रकार करते हैं?

भजन संहिता 145:8-9

भजन संहिता 145:13ख -14

९. क) यीशु ने अपनी महिमा को छोड़ा, जब वह हमारी सेवा करने के लिये आया। यीशु ने गतसमनी के बाग में अपने क्रूस पर चढ़ाये जाने के पहले क्या प्रार्थना की?

यूहन्ना 17:5, 22-23

ख) परमेश्वर की महिमा को परावर्तित करने के विषय में ये वचन क्या कहते हैं?

2 कुरिन्थियों 3:18 (गलतियों 5:22-23)

कुलुस्सियों 3:12-17

सा रां श

१०. क) इस पाठ के द्वारा आपको परमेश्वर तथा परमेश्वर के साथ अपने संबंध के विषय में कौन-सी सच्चाइयां दिखाई देती हैं?

ख) परमेश्वर के राज्य, पराक्रम और महिमा पर ध्यान केंद्रित करते हुये प्रार्थना का अंत करना क्यों महत्वपूर्ण है?

११. क) आज आपको किस क्षेत्र में विशेष शान्ति, सामर्थ्य और बुद्धि की आवश्यकता है?

ख) इस पाठ से कौन-सी प्रतिज्ञाएं आपको प्रोत्साहित करती हैं? (अपने पाठ को शीघ्रता से दोहराइये और यहां हवालों की सूची बनाइये)।

ग) ये प्रतिज्ञाएं आपको क्या करने प्रोत्साहित करती हैं?

१२. जब आप प्रभु को सारी स्तुति और महिमा देते हैं, उसकी महिमा आपके जीवन में प्रतिबिम्बित होती है। उसकी महिमा के कौन-से प्रकाशन आप सर्वाधिक चाहते हैं कि आत्मा आप में उत्पन्न करे?

पुनर्विलोकन परमेश्वर से संबंध जोड़ना: प्रभु की प्रार्थना में अन्तर्दृष्टि

१३. क) प्रार्थना का आरंभ एवं अंत परमेश्वर तथा उसकी इच्छा पर ध्यान केंद्रित करते हुये करना क्यों महत्वपूर्ण है?

ख) व्यक्तिगत आवश्यकताओं और समस्याओं को लेकर परमेश्वर के पास आने के विषय में यीशु ने क्या सिखाया? हमें उससे क्या मांगना चाहिये?

१४. जब आप इन वाक्यांशों पर सोचते हैं तो आपके मन में क्या आता है?

हे हमारे पिता ...

तू जो स्वर्ग में है ...

तेरा नाम पवित्र माना जाए।

तेरा राज्य आए; तेरी इच्छा जैसी स्वर्ग में पूरी होती है, वैसे पृथ्वी पर भी हो।

हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।

हमारे अपराधों को क्षमा कर।

जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है,
वैसे ही तू भी हमारे अपराधों को क्षमा कर।

हमें परीक्षा में न ला, परन्तु बुराई से बचा।

क्योंकि राज्य और पराक्रम और महिमा सदा तेरे ही हैं।

आमीन।

१५. इस अध्ययन से आप ने परमेश्वर तथा परमेश्वर के साथ अपने संबंध के विषय में क्या सीखा है?

१६. अपनी अद्‌भुत सेवकाई से संबंधित कौन-सा भेद यीशु ने उस शिष्य को प्रदान किया जिसने कहा था, "हे प्रभु ... प्रार्थना करना ...हमें भी तू सिखा दे"?

प्रार्थना करने हेतु एक गाइड के रूप में प्रभु की प्रार्थना

हे हमारे पिता तू जो स्वर्ग में है	प्रिय स्वर्गीय पिता, तेरा धन्यवाद करता हूं कि मैं तुझे पिता कहकर पुकार सकता हूं।
तेरा नाम पवित्र माना जाए।	तेरे नाम का आदर किया जाये क्योंकि तू अनुग्रहकारी, प्रेमी, दयालु, भला, बुद्धिमान, चिंता करनेवाला, समझनेवाला, न्यायी, शुद्ध, पवित्र, सर्वसामर्थी और सर्वज्ञानी है। मैं तेरी आराधना करता हूं।
तेरा राज्य आए;	प्रभु, मेरे पास जो कुछ है और मैं जो कुछ हूं वह सब मैं तुझे देता हूं और तुझ से निवेदन करता हूं कि आज अपने पवित्र आत्मा के द्वारा तू मुझ में राज्य कर।
हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे।	आज, तेरी प्रतिज्ञा के अनुसार, मेरी सारी-शारीरिक, भावनात्मक, आत्मिक-आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये मैं तेरी ओर निहारता हूं। (अपनी व औरों की विशिष्ट आवश्यकताओं के लिये प्रार्थना कीजिये।)
हमारे अपराधों को क्षमा कर।	प्रभु तेरा धन्यवाद करता हूं कि तू ने क्रूस पर मेरे सारे पापों का दाम चुका दिया है। (कोई विशिष्ट पाप स्मरण आये तो उसे मान लीजिये, और उसके क्रूस के द्वारा दी जानेवाली क्षमा के लिये उसका धन्यवाद कीजिये।)
जिस प्रकार हम ने अपने अपराधियों को क्षमा किया है,	इसलिये कि तू ने, जब क्रूस पर अपना प्राण दिया, मेरे जीवन के सारे पापों के लिये मुझे क्षमा कर दिया है, मैं औरों के प्रति अपने मन में अक्षमाशीलता बनाये रखना नहीं चाहता। (अपनी क्षमा की घोषणा उन सभी विशिष्ट लोगों के लिये कीजिये जो याद आते हैं।)
और हमें परीक्षा में न ला,	प्रभु मुझे अपने पवित्र आत्मा से भर दे कि आज तेरी इच्छा पूरी करने और मेरे सामने आनेवाली परीक्षाओं का प्रतिरोध करने के लिये वह मुझे सामर्थ्य प्रदान करे। (कोई भी पाप जो स्मरण आता हो मान लीजिये। उसका धन्यवाद कीजिये कि मसीह क्रूस पर आपके सारे पापों के लिये मरा।)
परन्तु बुराई से बचा।	प्रभु अपने आत्मा और अपने बलवान स्वर्गदूतों के द्वारा शत्रु से मेरी रक्षा कीजिये। तेरा धन्यवाद हो कि तेरा आत्मा जो मुझ में निवास करता है वह संसार में विद्यमान बुराई की ताकतों से बड़ा है। (उन लोगों की रक्षा या छुटकारे के लिये प्रार्थना कीजिये जिनके लिये आपके मन में बोझ है।)
क्योंकि राज्य तेरा है	हे पिता, मैं तेरी स्तुति करता हूं कि तू हमारे संसार तथा सारी सृष्टि के ऊपर राज्य करता है।
पराक्रम तेरा है	न कि राजा या राष्ट्र, वरन केवल तू ही सर्वसामर्थी है। सारा पराक्रम तेरा ही है।
महिमा सदा तेरी है आमीन।	तेरा नाम सर्वदा के लिये महिमामय है - तू पवित्र, अनुग्रहकारी, प्रेमी, विश्वासयोग्य है। हे प्रेमी स्वर्गीय पिता, मैं तुझ से प्रेम करता हूं और तेरी स्तुति करता हूं। आमीन।।

प्रमुख टिप्पणियां

पाठ	पृष्ठ	टिप्पणी क्रमांक तथा विषय
1-	11	"परमेश्वर के साथ जीना सरल है" - ए. डब्ल्यु. टोझर
	12	2. "मसीह को क्यों मेरे बदले में अपना प्राण देना पड़ा?
		क) प्रायश्चित
	13	ख) धर्मी ठहराया जाना
2-	19	2. यीशु परमेश्वर के दाहिने हाथ
	20	3. फिलिप केलर का स्वर्ग पर अनुचिंतन
3-	28	1. परमेश्वर ने स्वयं को प्रकट किया है
4-	36	2. परमेश्वर की इच्छा को परखना
	37	3. पवित्र आत्मा
	38	4. कठिन समयों में परमेश्वर पर भरोसा करना
6-	51	1. क) उद्धार
		ख) मेल
	52	2. झूठी दोष-भावना, लुईस डब्ल्यु. जॉन्सन द्वारा
7-	59	1. दोष न लगाओ,
8-	66	1. जंगल में यीशु की परीक्षा
		2. यीशु की परीक्षा मंदिर के भीतर नहीं हुई थी
		3. शैतान
9-	74	3. प्रतिबंधित शैतान

संदर्भ ग्रंथ सूची

फुलम, इव्हरेट् एल.। *लिविंग द लॉ:र्डस् प्रेयर,* न्यू योर्क, न्यू योर्क: बैलेन्टाइन बुक्स्, 1983

हेन्री, मैथ्यु, *मैथ्यु हेन्रीज कमेन्टरि इन वन वोल्यूम,* ग्रैंड रेपिड्स, मिशीगन: जोन्डरवैन कारपोरेशन, 1961

दी इन्टरलिनियर *ग्रीक-इंग्लिश न्यू टेस्टामेन्ट,* लंडन, इंग्लैंड: सैम्युएल बैगस्टर एंड सन्स् लिमिटेड, 1974

केलर, डब्ल्यु फिलिप्प, *अ लेमैन लुक्स एट एट द लार्ड्स प्रेयर,* शिकागो, इलेनॉइस: मूडी प्रेस, 1976

लाइफ एप्लिकेशन बाइबल, न्यू इंटरनेशनल वर्जन, व्हीटन, इलेनॉइस: टिन्डल हाऊस पब्लीशर्स, आइएनसी., 1991

द *न्यू इंटरनेशनल वर्जन स्टडि बाइबल,* ग्रैंड रेपिड्स, मिशीगन: जोन्डरवैन कारपोरेशन, 1985

द *न्यू इंटरनेशनल वर्जन टोपिकल स्टडि बाइबल,* ग्रैंड रेपिड्स, मिशीगन: जोन्डरवैन कारपोरेशन, 1989

वाइन, डब्ल्यु. ई. । *वाइन्स् एक्स्पोजिटरि डिक्शनरि ऑफ ओल्ड एंड न्यू टेस्टामेन्ट वर्ड्स,* ग्रैंड रेपिड्स, मिशीगन: बेकर बुक हाऊस कंपनी, 1981

वाल्वुर्ड, जॉन एफ. एंड झक, रॉय बी., द *बाइबल नॉलेज कमेन्टरि, न्यू टेस्टामेन्ट,* स्क्रिप्चर प्रेस, 1983

विक्लिफ बाइबल कमेन्टरि, शिकागो, इलेनॉइस: मूडी प्रेस, 1962

लेखिका का परिचय :

डायना शिक, क्रिएटिव लिविंग इन्टरनेशनल की संस्थापिका एवं क्रिएटिव लिविंग बाइबल स्टडी की लेखिका है। 1971 से 1985 तक वह केम्पस क्रूसेड फॉर ख्राइस्ट इन्टरनेशनल की स्टाफ मेंबर थीं। 1985 में उन्होंने क्रिएटिव लिविंग इन्टरनेशनल की स्थापना की जब उन्होंने रचनात्मक जीवन बाइबल अध्ययन लिखना आरंभ किया। उन्होंने, लोगों को आज की चुनौतियों का सामना करने हेतु बाइबलीय सिद्धांतों की खोज करने में सहायता करने के लिये, बड़े पैमाने पर लेखन तथा प्रचार कार्य किया है। उन्होंने निम्नलिखित विषयों पर अंग्रेजी में 21 बाइबल अध्ययन श्रृखलाएं लिखी हैं:

- उत्पत्ति [Genesis]
- निर्गमन से यहोशू तक [Exodus through Joshua]
- दाऊद का जीवन [Life of David]
- योना [Jonah]
- रूत [Ruth]
- भजन संहिता [Psalms]
- नीतिवचन [Proverbs]
- लूका [Luke]
- यूहन्ना [John]
- प्रेरितों के काम [Acts]
- रोमियों [Romans]
- फिलिप्पियों [Philippians]
- इफिसियों [Ephesians]
- इब्रानियों [Hebrews]
- 1 यूहन्ना [1 John]
- बाइबल की महिलाएं (24 महिलाओं की 2 श्रृंखला) [Women of the Bible (2 series of 24 women each)]
- प्रभु की प्रार्थना [Lord's Prayer]
- परमेश्वर के हथियार [Armor of God]
- आत्मा का फल [Fruit of the Spirit]
- भजन संहिता 23 [Psalm 23]

डायना की दो बेटियां हैं और वह अपने पति माइकेल के साथ वाशिंगटन डी. सी. के पास रेस्टॉन वरजिनीया में रहती हैं। वह टेक्सास स्टेट विश्वविद्यालय से क्रिश्चन मिनिस्ट्रि में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त हैं।

प्रभु की प्रार्थना में दो भाग है। प्रथम भाग परमेश्वर तथा उसके जगत में किये जानेवाले उद्धार के कार्य पर ध्यान केंद्रित करता है (मत्ती 6:9-10)। दूसरा भाग व्यक्तिगत आवश्यकताओं तथा दैनिक संघर्ष पर जोर देता है (मत्ती 6:11-13)। यह क्रम स्पष्ट करता है कि प्रार्थना का आरंभ स्वयं से हटकर परमेश्वर के ऐश्वर्य तथा हमारे जीवन में उसकी इच्छा (उसका राज्य या प्रभुता) पर ध्यान केंद्रित करने से होना चाहिये। यह हमें तैयार करता है कि जब हम चिन्ताओं और आवश्यकताओं के लिये प्रार्थना करते हैं तो अपनी इच्छा से बढ़कर उसकी इच्छा को चाहें।

संभवतः स्मरण रखने के लिये सब से महत्वपूर्ण बात यह है कि यीशु ने प्रभु की प्रार्थना पाखंड़ का सख्ती से काट-छांट करनेवाली शिक्षा के संदर्भ में दी थी। यह प्रार्थना एक लिटर्जी (उपासना-पद्धति) बनने के लिये कदापि नहीं थी, परन्तु प्रेमी स्वर्गीय पिता से प्रतिदिन की आवश्यकताओं के विषय में निष्कपट बातचीत का उदाहरण प्रस्तुत करने दी गई थी। जब हम प्रभु की प्रार्थना हृदय से करते हैं केवल तब ही हम परमेश्वर को आनन्दित करते हैं और स्वयं के लिये तृप्ति पाते हैं।

फिर भी प्रभु की प्रार्थना के अर्थ पर विचार किये बिना उसका उच्चारण कर देना कितना सरल हैं। हमारे इस महान प्रार्थना के अध्ययन का उद्देश्य यह है कि हम उसके अर्थ को और अधिक पूरी रीति से समझ सकें और उसे पूरी निष्कपटता से करने योग्य बन सकें। दूसरा उद्देश्य यह है कि इस आदर्श-स्वरूप प्रार्थना से उन सिद्धान्तों को सीखें जो हमारे प्रार्थना के सामान्य जीवन का निर्देशन करते हैं कि हम यीशु के समान बने, ताकि हम भी उस सामर्थ्य तथा आनन्द को जान सकें जो एक पैर समय में तथा दूसरा अनन्तकाल में जड़ा होने से प्राप्त होता है।

NOT FOR SALE
For Private Circulation Only